अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-41, अंक-10, 01-15 जनवरी, 2018

2018

नव-वर्ष मंगलमय हो!

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 41, अंक : 10, 01-15 जनवरी, 2018

प्रधान संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595
संपादक
अशोक मोती
फोन : 9430517733

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. आयोजन नहीं, संघर्षों द्वारा गांधी... 2
2. अहिंसा की ताकत... 3
3. अहिंसक नियोजन के मूलभूत... 5
4. मीठा झगड़ा... 7
5. जनता के दखल देने का समय आ... 9
6. हाथ से न छोड़ें विवेक की लगाम... 11
7. संस्थाओं की खींचतान से नुकसान... 13
8. युवाओं को मौका दें राजनीतिक... 14
9. भारत की कृषि : समस्या... 15
10. नववर्ष आत्मबल बढ़ाने का वर्ष... 19
11. ध्यान!!! 20

प्रधान संपादक की कलम से...

आयोजन नहीं, संघर्षों द्वारा गांधी को याद करें

गांधीजी ने भारत की स्वतंत्रता के संघर्ष को नया आयाम दिया, यह तो सर्वविदित है। किन्तु वे केवल भारत की स्वतंत्रता के लिए ही संघर्षरत नहीं थे। भारत की गुलामी का कारण औपनिवेशिक साम्राज्यवाद था, इसलिए वे औपनिवेशिक साम्राज्यवाद के विरुद्ध भी अभियान को धार दे रहे थे। स्वदेशी का विचार इसकी ही अभिव्यक्ति थी। औपनिवेशिक साम्राज्यवाद, खुद में पूंजीवाद के विकासक्रम का एक दौर था, जिसे देर-सबेर खत्म होना था। गांधीजी यह भी देख रहे थे कि औपनिवेशिक साम्राज्यवाद की समाप्ति के बाद पूंजीवाद नया स्वरूप ग्रहण करेगा। इतना ही नहीं वे यह समझ रहे थे कि नये स्वरूप के बाद वह भी स्थायी नहीं रहेगा। उसमें भी कालांतर में बदलाव आयेगा। इस प्रकार पूंजीवाद का बाह्य स्वरूप, ढांचा और व्यवस्थाओं और उनकी संस्थाओं में परिवर्तन होता रहेगा। किन्तु उसकी मूल प्रवृत्तियों, शक्तियों एवं प्रक्रियाओं की निरंतरता बनी रहेगी। इसी कारण गांधीजी ने भारत की आजादी की लड़ाई, औपनिवेशिक साम्राज्यवाद मे खिलाफ लड़ाई और पूंजीवाद की मूल प्रवृत्तियों, शक्तियों व प्रक्रियाओं के खिलाफ की लड़ाई, तीनों को एकीकृत कर दिया था।

आज हमें समझना होगा कि पूंजीवाद की कौन-सी मूल प्रवृत्तियां, शक्तियां और प्रक्रियाएं आज भी जारी हैं, जिनके खिलाफ गांधीजी निरंतर संघर्ष करते रहे और आजादी की लड़ाई की व्यूह-रचना में जिन्हें समावेशित करते गये।

मुख्यतः इन्हें निम्न बिन्दुओं में समेटा जा सकता है। गांधीजी ने पाया कि पूंजीवाद के विकास के कारण आर्थिक-सामाजिक संबंधों में कहीं अधिक बुनियादी और दूरगामी परिवर्तन हो रहे थे। ये परिवर्तन मानव सभ्यता को गिरावट की ओर ले जा रहे थे। पूंजीवाद के खिलाफ लड़ाई में निम्न बदलावों की ओर उन्होंने विशेष ध्यान दिया—1. मनुष्य की आत्मिक शक्ति के विकास को यह अवरुद्ध करता है; 2. पूंजी के केन्द्रीकरण की प्रक्रिया; 3. श्रमिक का अपने उत्पादन के साधनों व स्थानीय संसाधनों से विलगाव; 4. श्रम का शोषण तथा संसाधनों का दोहन; 5. यांत्रिक व्यक्ति का विकास; 6. बिना लोकसत्ता के लोकतंत्र के विकास का प्रयास; 7. लोकसमुदाय का पतन—परंपरागत गांव व परंपरागत ज्ञान समाप्त होने लगा।

पूंजीवाद के इन मूल परिवर्तनकारी प्रक्रियाओं का निषेध करने तथा उनसे भिन्न विकल्प के निर्माण के लिए, गांधीजी ने वैकल्पिक रणनीति बनायी। जिसके कुछ सूत्र निम्न हैं—

1. परिवर्तन व परिवर्तनकारी शक्ति के मूल में नैतिक शक्ति व आत्मिक शक्ति को निरंतर क्रियाशील रहना होगा तथा इन्हें उच्च से उच्चतर स्तर पर ले जाने का काम परिवर्तनकारी शक्तियों को करना होगा।

2. पूंजी को लोक स्वामित्व के अंतर्गत लाना होगा।

3. ऐसी कोई टेक्नोलॉजी स्वीकार्य नहीं होगी जिसके अंतर्गत श्रमिक को उसके उत्पादन के साधन से अलग किया जाये।

4. श्रम की प्रतिष्ठा को उन्होंने आवश्यक माना तथा शरीर श्रम को नये समाज के निर्माण के लिए एक अनिवार्य मूल्य के रूप में रखा।

5. केन्द्रीकृत एवं व्यापाक उत्पादन प्रणाली तथा उसके लिए वैश्विक बाजार का विरोध करने के लिए तथा उन पर नियंत्रण रखने के लिए उन्होंने स्वदेशी व लोक स्वामित्व का विचार रखा। केन्द्रीकृत उत्पादन एवं वैश्विक बाजार के विरोध के लिए असहकार एवं बहिष्कार की रणनीति पर अमल करने पर जोर दिया।

6. पूंजीवाद ने जिस यांत्रिक व्यक्ति का निर्माण किया है, उसके स्थान पर नये समाज निर्माण के लिए अंतरात्मा प्रेरित नैतिक व्यक्ति का निर्माण; तथा उनके माध्यम से लोक एकता का विस्तार व लोकसत्ता का निर्माण। लोकसत्ता सभी प्रकार की हिंसा के विरुद्ध, अहिंसा की सामूहिक साधना पर टिकेगी। सत्याग्रह एवं वैकल्पिक रचना के कार्यक्रमों द्वारा लोकसत्ता का दायरा भी व्यापक होता जायेगा एवं लोकसत्ता की जड़ें भी गहरी होती जायेंगी।

7. ग्राम स्वराज को नये समाज निर्माण की नींव के रूप में देखा। इसके लिए गांव का शोषण, गांव के उत्पादक श्रमिकों का शोषण तथा गांव के संसाधनों के दोहन की प्रक्रिया को उलटने की रणनीति उन्होंने बनायी।

आज सत्ता, संस्था एवं पूंजीवाद द्वारा गांधी के मूल विचारों को खत्म करने का षड्यंत्र जारी है—गांधी के नाम पर। गांधी के सच्चे तेज को जीवित करके ही हम अपनी विरासत को आगे बढ़ा सकेंगे।

बिमल कुमार

अहिंसा की ताकत

❑ महात्मा गांधी

आप कहा करते हैं कि आपकी कल्पना का स्वराज्य राजा और रंक दोनों के साथ न्याय करेगा, दोनों की रक्षा करेगा, दोनों के हक सुरक्षित रखेगा। इसमें विरोध पैदा नहीं होता? देखिए, मजदूर और मालिक, धनवान् और उसका ड्यौढ़ीवान, ब्राह्मण और भंगी, अमीर और गरीब, जिस ओर नजर डालिए द्वंद्व-युद्ध ही दिखायी पड़ता है। 'है' और 'नहीं' का झगड़ा अनादि प्रतीत होता है। ऐसा मालूम होता है कि मानों दूसरे को दुखी किये बिना मनुष्य सुखी हो ही नहीं सकता। यह स्थिति प्रकृति की ही बनायी हुई मालूम होती है। आप प्रकृति के विरुद्ध खड़े होना चाहते हैं? क्या यह हवा को आलिंगन करने जैसी बात नहीं?

यदि इस जगत में रामराज्य जैसी कोई चीज किसी समय थी, तो वह पुनः स्थापित होनी चाहिए। मैं मानता हूं कि रामराज्य था। राम अर्थात पंच, पंच अर्थात परमेश्वर, पंच अर्थात लोकमत! जब लोकमत बनावटी नहीं होता, तब वह शुद्ध होता है। जो राज्य लोकमत पर निर्भर है वह उस जगह का रामराज्य हुआं ऐसा तंत्र कहीं-कहीं आज भी हम देख पाते हैं। कुछ जमींदार आज अपनी रियाया के साथ सादगी में होड़ कर रहे हैं, और उनमें घुल-मिल जाने की कोशिश कर रहे हैं। सभी राजा लुटेरे ही हों सो बात नहीं है। अपनी यात्राओं में मैंने भले, बुरे सभी तरह के शासक देखे हैं। सभी मालिक हृदयहीन नहीं होते। यह सच है कि गरीबों के रक्षक या मित्र बनकर रहने वाले धनिकों के पर्याप्त उदाहरण मैंने नहीं देखे और जो देखे हैं, उनमें भी मैंने सुधार की गुंजाइश तो पायी ही है। ये अनुभव उस तंत्र में मिले हैं जिसे मैं राक्षसी मानता हूं। पर लंका में भी विभीषण अपवादरूप हो तो आश्चर्य ही क्या? जहां एक है, वहां अनेक की आशा अवश्य की जा सकती है। अपवाद को गुणाकार करने से अपवाद साधारण स्थिति का रूप धारण कर लेता है। यह तो जो संभव है, मैंने उसकी बात की है।

शक्य को अस्तित्व में लाने का प्रयत्न सत्याग्रह है। सत्य अर्थात न्याय! न्यायतंत्र अर्थात सत्ययुग अथवा स्वराज्य, धर्मराज्य, रामराज्य या लोकराज्य! ऐसे तंत्र में राजा प्रजा का रक्षक होता है, मित्र होता है। उसके और जनता के गरीब-से-गरीब अंग के जीवन में आज जैसा जमीन-आसमान का अंतर नहीं होता। राजा के महल और प्रजा के झोपड़ों में उचित साम्य होता है। दोनों की आवश्यकताओं में कुछ भेद हो भी तो वह मामूली ही होता है। राजा और प्रजा दोनों के लिए सुंदर जलवायु हो, प्रजा को अपनी आवश्यकता के अनुसार खाने को मिले। राजा अपने भोजन में छप्पन भोग न रखकर छः भोग से संतोष माने। गरीब लकड़ी या मिट्टी के बरतन से काम चलाये, और राजा चाहे तो पीतल आदि धातु के बरतनों का इस्तेमाल कर ले। सोने-चांदी के बरतनों का लोभ करने वाला राजा तो प्रजा को लूटने वाला ही होगा!

गरीब को उसकी आवश्यकता के कपड़े मिलने चाहिए। राजा के पास कुछ अधिक कपड़े हो सकते हैं, पर उसके और गरीब के कपड़ों में द्वेष उपजाने वाला अंतर नहीं होना चाहिए। राजा और रंक दोनों के बालक एक ही प्राथमिक शाला में पढ़ते हों। राजा प्रजा का बड़ा बनकर न रहे। प्रजा का कुछ हित करे, तो मन में यह खयाल न लाये कि मैंने उपकार किया है। धर्म में उपकार को स्थान नहीं है। प्रजा की सेवा करना राजा का धर्म है। जो बात राजा के लिए कही है, वह सब धनवानों पर लागू होती है। जिस प्रकार राजा का धर्म प्रजा का रक्षक और मित्र बनकर रहने का है, उसी प्रकार गरीब का भी यही धर्म है कि वह राजा से द्वेष न करे। उसे इस बात का ध्यान होना चाहिए कि उसकी गरीबी का बहुत-कुछ कारण उसके अपने दोष और कमजोरियां हैं। रंक अपनी स्थिति को सुधारने का प्रयत्न करते हुए भी राजा से द्वेष न करे, उसका नाश न चाहे, उसके सुधार की इच्छा करे। रंक राजा बनने की आकांक्षा न करे, बल्कि अपनी आवश्यकताएं पूरी करके संतुष्ट रहे। इस प्रकार दोनों एक-दूसरे की मदद करते रहें, यही मेरी कल्पना का स्वराज्य है।

मेरी दृष्टि में इस स्वराज्य की प्राप्ति के लिए राजा और प्रजा दोनों की शिक्षा-दीक्षा में महत्त्वपूर्ण फेरफार आवश्यक है। लुटेरे और लूटने वाले दोनों अंधेरे में भटक रहे हैं। वे रास्ता भूले हैं। दो में से एक की भी स्थिति सहन करने योग्य नहीं है। पर राजवर्ग और धनिक वर्ग के गले यह बात जल्दी नहीं उतरेगी।एक के गले उतरी तो दूसरे के अपने-आप उतर सकेगी, यह सोचकर मैंने रंक या गरीब की सेवा पसंद की है। सब राजा नहीं हो सकते, पर 'सब' में तो सभी के समा सकने की गुंजाइश है। इसलिए यदि गरीब को अपने हक का और साथ ही अपने कर्तव्य का भान हो जाये, तो आज ही स्वराज्य है! यह खयाल सत्याग्रह द्वारा जितनी तेजी से व्याप्त होता है, उतनी तेजी से और किसी मार्ग से कभी नहीं हो सकता। पिछले बारह महीनों में हमने प्रत्यक्ष इसका अनुभव किया है। इस सत्याग्रह में जिस हद तक दोष आ गया था, उस हद तक हमारे स्वराज्य-

प्राप्ति के मार्ग में बाधा पड़ी है।

सत्याग्रह लोक-शिक्षा और लोक-जागृति का बड़े-से-बड़ा साधन है। सत्याग्रह का दूसरा अर्थ है आत्मशुद्धि! राजवर्ग से आत्मशुद्धि की बात ही की जा सकती है, उस पर असर होने में समय की प्रतीक्षा करनी पड़ती है। गरीब तो सहारे की तलाश में ही रहते हैं। उन्हें अपने दर्द का अहसास तो है ही, उपाय वे आजमाते हैं। ऐसी दशा में कोई सच्चा सेवक मिल जाता है, तो वे दृढ़ता से उसके साथ हो जाते हैं और यथाशक्ति उसके उपायों के अनुसार चलते हैं। अतः एक दृष्टि से रंक को हम जिज्ञासु कह सकते हैं। स्वराज्य भी उसी की मार्फत मिलेगा। वह अपनी शक्ति को पहचाने और पहचानकर भी उसका मर्यादित उपयोग ही करे। इतना हो, तो मेरी कल्पना का स्वराज्य आया ही समझना चाहिए। प्रजा इतनी शक्ति प्राप्त कर लेने के बाद, उसे रोकने वाले परराज्य और स्वराज्य, दोनों का सफल मुकाबला कर सकती है।

इस बीच यदि राजवर्ग और धनिकवर्ग समय को पहचानें तो वे अपने द्रव्य और द्रव्योपार्जन की अपनी शक्ति के मालिक न रहकर, उसके न्यासी बन जायें और न्यासी रहकर ही अपनी आजीविका पाने का हक प्राप्त करें। यदि ऐसा न हुआ तो राजा और रंक, अमीर और गरीब के बीच का विषमय द्वंद्व बना ही रहेगा। सत्याग्रह का वेग इस विष को निःशेष करेगा, इस आशा से मेरे-जैसे लोगों ने इस अस्त्र को सर्वार्पण किया है।

अहिंसा पर विचार करते समय (एक प्रश्न यह उठाया जाता है कि) यदि किसी बहन पर कोई राक्षसी वृत्ति का पुरुष हमला करने आये और उस समय यदि वहां कोई पुरुष हो तो क्या उसे शस्त्रबल से उस बहन के शील की रक्षा नहीं करनी चाहिए? क्या बहनों को स्वयं शस्त्र चलाने की शिक्षा लेकर, अपनी रक्षा करनी नहीं सीखना चाहिए? शस्त्रबल का प्रयोग करना निश्चय ही हिंसा-दोष माना जायेगा। किन्तु इसका ऐसा अर्थ मैंने कभी किसी को नहीं करने दिया कि पास खड़े हुए पुरुष या स्त्री को उस बहन की रक्षा नहीं करनी चाहिए और उसके शील-भंग को सहन कर लेना चाहिए। इसके विपरीत मैंने तो यह कहा है कि जो पुरुष इस प्रकार शील-भंग होने देगा, वह कायर माना जायेगा। वह हिंसा में भागीदार होगा क्योंकि कायरता में ही हिंसा छिपी हुई है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि कायर की हिंसा की अपेक्षा वीर की हिंसा बहुत कम दोषपूर्ण है। किसी वीर पुरुष या स्त्री को अहिंसा का पाठ पढ़ाया जा सकता है किन्तु कायर को यह पाठ पढ़ाना लगभग असंभव जान पड़ता है।

एक बात जो मैंने शायद कहीं नहीं लिखी, उसे जरूर यहां लिखना चाहता हूं। सीता के पास कोई शस्त्र नहीं था, किन्तु उनके पास आत्मिक बल था। अतः मलिन स्पर्श करने से पहले रावण के लिए उनकी सम्मति लेना आवश्यक था। बहनों में ऐसा ही आत्मविश्वास होना चाहिए और इसी कारण हमने विशेष रूप से बहनों के लिए द्रौपदी की प्रार्थना आरंभ की है। किन्तु यह तो आदर्श की बात हुई। जिस बहन के पास राक्षस आ खड़ा हुआ है, वह उस समय क्या करे? यदि उसमें सचमुच वीरता होगी और करुणा भी होगी तो वह उससे डरने के बजाय उसे अपनी तेजोमय करुणा द्वारा पिघला देगी। किन्तु मान लिया जाये कि उस बहन में ऐसी भावना उत्पन्न नहीं हुई तो उसमें क्रोध की भावना तो होगी ही। इस क्रोध से प्रेरित होकर वह उस राक्षस को तमाचा मारेगी और ऐसी चीख-पुकार मचायेगी कि वह वहां से भाग जायेगा। या फिर वह वहीं उसके पैर पड़ेगा। कहने का तात्पर्य यह कि बहन अपने शारीरिक बल का पूरी तरह प्रयोग करेगी। तो क्या यह हिंसा नहीं हुई? यदि ऐसा ही है तो फिर हथियार क्यों न रखा जाये? मेरा अभिप्राय यह है कि हथियार रखने और उन्हें चलाना सीखने में तो हिंसा है किन्तु उपर्युक्त परिस्थिति में तमाचा मारने, नोचने-खसोटने आदि में हिंसा नहीं है। यदि चूहे द्वारा बिल्ली को काटने में हिंसा होती हो तभी उक्त स्थिति में पड़ी हुई स्त्री का वैसा व्यवहार भी हिंसा माना जायेगा। तमाचा मारने वाली बहन अपने तमाचे पर विश्वास नहीं करती बल्कि उसका विश्वास अपने प्रभु पर है। अलबत्ता, उसके मन में करुणा उत्पन्न नहीं हुई है। क्रोध करना तो सभी को आता है। उक्त बहन क्रोध द्वारा अपना विरोध प्रकट करती है। व्यभिचारी पुरुष जब किसी बहन के पास जाता है तो वह यह मान लेता है कि उक्त बहन को वह वश में कर लेगा अर्थात आखिरकार वह भी कामातुर हो उठेगी। वह बहन यह कैसे बताये कि यह असंभव है? या तो अपनी शांत किन्तु प्रचंड करुणा से अथवा अपने कोलाहल और छटपटाहट से! तमाचा आदि मारना तो वैसा ही है जैसे बिल्ली के सामने चूहे की छटपटाहट से! उस बहन के तमाचे से व्यभिचारी व्यक्ति को किसी प्रकार की शारीरिक चोट तो नहीं लगती। यदि हम जरा गहराई में उतरें तो यह बात स्पष्ट हो जायेगी। यहां मैं राक्षसी बलवाली स्त्रियों की बात नहीं कर रहा हूं। ऐसी स्त्री तो अपने राक्षसी बल के घमंड में भूली होगी और यदि उसकी अपेक्षा ज्यादा बलवान् व्यक्ति आ पहुंचे तो शायद वह आत्मसमर्पण कर देगी। यहां मेरी नजर के सामने आश्रम की बहनों जैसी शारीरिक बल से रहित किन्तु आत्मबल में विश्वास करने वाली बहनें या बालाएं हैं। उनका तमाचा हिंसा की निशानी नहीं बल्कि उनके विरोध की पुकार है। उनकी यह पुकार उस व्यभिचारी को दीन बना देगी, क्योंकि गुनाह कायर होता है। व्यभिचारी व्यक्ति यह जानता है कि वह गुनाह कर रहा था। मेरे इस सुझाव के पीछे यह विश्वास है कि वह बहन मृत्युपर्यंत उस पुरुष को कदापि आत्मसमर्पण नहीं करेगी। उसका यह क्रोध, उसकी यह जागृति, स्वयं उकसे लिए और उसी प्रकार उस व्यक्ति के लिए, उसके इस निश्चय की सूचक है कि व राक्षस उस बहन के क्रोध के कारण दीन बनने के बजाय उसे चोट पहुंचाये और उसे पछाड़ने का निश्चय करे। उस समय

अहिंसक नियोजन के मूलभूत सिद्धांत

❑ **विनोबा**

हम जब अहिंसक समाज-रचना के बारे में सोचते हैं तब उसके साथ आर्थिक विचार भी जोड़ देते हैं। यह ठीक है कि आर्थिक चिन्तन समाज-रचना के चिन्तन का अंग ही है और आवश्यक भी है; फिर भी अर्थशास्त्र उतना स्थिर नहीं होता जितना समाजशास्त्र होता है। समाजशास्त्र मनुष्य के मूलभूत गुणों पर अधिष्ठित होता है; लेकिन अर्थशास्त्र में मनुष्य के गुणों का प्रवेश है, साथ ही सृष्टिज्ञान का भी प्रवेश है। एटमिक एनर्जी की खोज के बाद समाज की आर्थिक रचना बिल्कुल अलग तरह से करनी होगी। और उस समय यदि अहिंसा कहेगी कि यह तो मुझसे नहीं हो सकेगा, मैं एक प्रकार की आर्थिक रचना से बंधी हुई हूं, तो अहिंसा संकुचित साबित होगा। मान लीजिए, कल अमेरिका हमसे पूछता है कि हम अहिंसा के आधार पर समाज-रचना करना चाहते हैं, तो आर्थिक रचना कैसी होनी चाहिए; और उस समय अगर मैं उन्हें यह कहता हूं कि आपको रोज आधा घंटा सूत कातना होगा, तो वह संकुचित दृष्टि होगी। बल्कि वह इस बात को मान्यता देने जैसा होगा कि अहिंसा अमुक काल में और अमुक स्थान में ही चल सकती है। इसलिए अहिंसा के लिए क्या करना चाहिए इसका जवाब अमेरिका की आज की स्थिति के संदर्भ में ही देना होगा। जो आर्थिक योजना हम हिन्दुस्तान को लागू करेंगे, वही अमेरिका को लागू नहीं होगी। और हिन्दुस्तान के लिए भी आज जो योजना लागू होगी, उसी का आग्रह पचास साल के बाद रखेंगे, तो वह अनुचित होगा। यह लचीलापन आर्थिक चिन्तन के लिए बहुत जरूरी होता है।

मैं हमेशा कहता हूं कि आर्थिक योजना के विषय में मेरा कोई आग्रह नहीं है। कोई भी सुझाव दे सकता है, उसमें कुछ विचार दिखें तो मैं अपने को बदलने को तैयार हूं। अहिंसक योजना में बिजली का उपयोग हो सकता है या नहीं, इस विषय में दोनों ओर जितनी दलीलें हो सकती हैं, वे सब हमारे सामने हैं। परंतु जब आप देश की योजना बनाने के लिए बैठेंगे, तब भिन्न-भिन्न परिस्थिति में भिन्न-भिन्न निर्णय लेने होंगे। ऐसा नहीं कि चरखा ही अहिंसा है। चरखे के आधार से भी शोषण हो सकता है। लेकिन थोड़ा-सा शोषण होता हो तो भी उसका दावा है कि वह पोषण देता है। कुछ लोग, पोषण मिले इसलिए, चरखे के द्वारा होने वाले थोड़े-से शोषण को मजबूरी से मान्य कर लेते हैं। जैसे चरखे के द्वारा शोषण हो सकता है, वैसे ऐसी रचना भी हो सकती है कि बहुत बड़े यांत्रिक उद्योग भी शोषण-मुक्त बन सकते हैं। बड़े उद्योग स्वभावतः शोषण-मोचन

यदि वह बहन दब जाये, यदि उसे भगवान याद न आये, यदि वह अपना आत्मविश्वास खोकर कांप रही हो तो उसे मरने की बात नहीं सूझेगी; और यदि मरने की बात सूझेगी भी तो मरना नहीं आयेगा। भयभीत होने से आत्मविश्वास सर्वथा मंद हो जाता है। संभवतः आजकल उनकी स्थिति ऐसी हो कि वह सोचे—''मुझमें ईश्वर के प्रति इतना विश्वास नहीं है कि मैं अपनी पवित्रता के बल पर ही राक्षस को भगा सकूं। बापू ने कहा है कि हथियार का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए क्योंकि वह तो हिंसा है। तब तो हाथ भी नहीं चला सकती। अरे राम, अब मैं क्या करूं? हाय, मैं तो मरी!'' इस तरह का विचार मेरे लिए असह्य है। ऐसी सीख मैंने किसी भी बहन या भाई को नहीं दी। मेरी सीख का हेतु किसी को दुर्बल बनाना कदापि नहीं है। यदि कोई दुर्बल बनता है तो यह बनने वाले की गलतफहमी है। किन्तु जहां मुझे ऐसी गलतफहमी के बारे में पता चले वहां मुझे उसे रोकना चाहिए। बहनें अबला हैं, इस बात को वे बिलकुल भूल जायें। जिनमें मौत को गले लगाने की इच्छा और साहस है, उन्हें कदापि निर्बल नहीं माना जा सकता। जोखिम आत्मा को नहीं शरीर को है। जो आत्मा शरीर के साथ अपने संबंध को क्षीण बना चुकी है, जो शरीर को तृणवत् बना चुकी है, उसे संसार भर के राक्षस मिलकर भी सता नहीं सकते, हरा नहीं सकते। इस पाठ को हर समझदार बालक और बाला सीख ले। ''हाय, मैं क्या करूं!'', इसके बजाय यह कहना चाहिए : ''मैं अपना शरीर और अपने प्राण दे दूंगी किन्तु कायर नहीं बनूंगी!'' उसका तमाचा मारना और नोचना-खसोटना इसी बात का सूचक है। यह अपने-आपमें अहिंसक कार्य है। उसमें शारीरिक क्षति पहुंचाने की शक्ति नहीं है। अतः वह हिंसा नहीं है बल्कि उसमें राक्षसी मन को हिला देने की, तमाचा मारने वाले को सजग कर देने की शक्ति है, इसलिए यह अहिंसा ही है।

...क्रमशः अगले अंक में

करने वाले नहीं होते, लेकिन उनके स्वभाव को मोड़ दे सकते हैं। पानी स्वभावतः ऊपर नहीं चढ़ता, लेकिन उसको ऊपर ले जा सकते हैं। वैसे ही कुछ बड़े यांत्रिक उद्योगों के स्वभवाव के साथ कुछ दूसरी वस्तुओं को जोड़कर उन्हें भी अहिंसा के लिए अनुकूल किया जा सकता है।

हम ऐसी निराग्रही वृत्ति रखेंगे, तभी ग्रामदान के बाद की योजना कैसी करनी, इसका ठीक-ठाक जवाब दे सकेंगे। मैंने कम्युनिस्टों से कहा था कि ऐसे पचास ग्रामदानी गांव, जिन्हें आपके विचार जंचते हैं, मैं आपको सौंपने को तैयार हूं। वहां आप अपनी योजना चलायें। हम देखेंगे कि गांव उससे किस तरह विकास करते हैं। वैसे ही समाजवादी, कांग्रेस वाले सभी को मैंने कहा कि आप कुछ गांव लें और अपनी-अपनी पद्धति से प्रयोग करें। ग्रामदान प्रेम के मार्ग से हुए हैं और सभी का हित साधना ही उसका उद्देश्य है। इसलिए आप अपनी-अपनी आर्थिक कल्पनाएं गांव वालों के सामने रखें और उससे दूसरे गांवों का शोषण न होता हो तो गांव वालों की सम्मति से अपना-अपना प्रयोग करें। लोगों को उसमें कुछ फरक करना हो तो वे वैसा करेंगे।

जब अंबर चरखे को मान्यता देने का सवाल आया था, तब उसकी भी काफी आलोचना हुई थी। कुछ लोगों का कहना था कि यह चरखा सिद्धांततः हमारे चरखे का विरोधी है, वह हमारे चरखे के लिए मारक साबित होगा। मैंने कहा था कि ऐसा होने का कोई कारण नहीं है। गांव को स्वावलंबी बनाना हो तो अंबर के सूत का ताना और सादे चरखे के सूत का बाना करके बुनाई करना गांव वालों को ज्यादा अनुकूल लग सकता है। कुछ मूलभूत आर्थिक प्रमेय कायम रखकर, उनकी दृष्टि से गलत कदम न पड़े इतनी सावधानता के साथ प्रयोग करने में कोई हर्ज नहीं होना चाहिए।

जिन आर्थिक प्रमेयों से कभी भी परिवर्तन नहीं किया जा सकता, उनमें से एक यह है कि मनुष्य का जमीन के साथ संबंध होना चाहिए। जब तक मनुष्य को बिना जमीन के हवा में से ही पोषण मिलने की योजना नहीं बनती, तब तक यह अटल प्रेम रहेगा। आगे जब हवा में से ही पोषण प्राप्त कर लेने की सुविधा होगी, तब कर्मयोग का महत्त्व नहीं रहेगा और ध्यानयोग का महत्त्व बढ़ेगा। भिन्न-भिन्न योगों का महत्त्व देश-काल-परिस्थिति सापेक्ष होता है।

ग्रामदान के बाद शहर का स्वरूप भी बदलेगा। आज गांव शहर वालों को जो दे रहे हैं, उनमें अगर वे परिवर्तन करते हैं, तो शहर भी अच्छे प्रकार से बनाये जा सकेंगे। कई बार लोग सवाल पूछते हैं कि क्या आप बंबई को तोड़ डालेंगे? मैं कहता हूं कि जहां हवा भी पूरी तरह से नहीं मिलती है, ऐसे शहर किसलिए बढ़ाने चाहिए? कुल मिलाकर सोचने पर लगता है कि अहिंसक योजना में एकदम छोटे-छोटे गांव नहीं रहेंगे, वैसे बहुत बड़े शहर भी नहीं रहेंगे। लोग पूछते हैं कि आपका यह पैदल चलना क्या आने वाले युग में टिक सकता है? मैं कहता हूं, आने वाले युग में क्या टिकेगा, जरा सुन लो। आगे के युग में एक तो हवाई जहाज टिकेंगे और दूसरा टिकेगा पैदल चलना। बीच वाले वाहन—रेल, मोटर आदि सब खत्म होंगे। क्योंकि तब देश को एक-एक इंच जमीन की जरूरत होगी। लोग सोचेंगे कि इस तरह रास्तों के कारण इतनी जमीन गंवाना ठीक नहीं। और हाथ में कुदाल लेकर सभी सीमेंट के रास्ते, रेल पटरियां खोद डालेंगे, वहां अनाज बोयेंगे। कभी जल्दी पहुंचना हो, तो हवाई जहाज से जायेंगे, नहीं तो पैदल घूमेंगे। इसलिए आगे के युग में ऐसे ही वाहन टिकेंगे, जिनका खेती से विरोध नहीं होगा।

हर युग की अलग-अलग आवश्यकता होती है। लेकिन कुछ मूलभूत बातें सभी युगों के लिए समान होती हैं। मनुष्य की इंन्द्रियां 'करण' हैं और बाकी उनकी मदद करने वाले सभी साधन 'उप-करण' हैं। करण से उप-करण का महत्त्व बढ़ना नहीं चाहिए। जिस युग में 'उप-करणों' का महत्त्व बढ़ेगा, वह युग मनुष्य को दुःख में डालेगा। आंखें बिगड़कर चश्मे बढ़ जायें, तो वह खुशी की नहीं, दुःख की बात होगी। क्योंकि मनुष्य की शक्ति बढ़नी चाहिए और उपकरणों को उप-करण के यानी गौण स्थान पर ही रहना चाहिए। यह कारण—उपकरण—विवेक एक मूलभूत सिद्धांत है। आज मनुष्य का जीवन अत्यन्त कृत्रिम बन गया है। भगवान ने शांति के लिए रात का अंधेरा पैदा किया। लेकिन मनुष्य ने कमाल किया है वह अंधेरे को भी आग लगा देता है! रात को शहरों में बिजली की जगमगाहट देखकर लगता है, रात्रि के शांत समय में आसमान की अनगिनत तारिकाओं का सौंदर्य देखने के बदले बिजली की जगमगाहट देखना यह कैसा पागलपन है! यह कृत्रिम जीवन टिकने वाला नहीं। वह अपने खुद के बोझ से ही खत्म होने वाला है। इस सबसे छुटकारा पाने के लिए यह बहुत जरूरी है कि मनुष्य का खेती के साथ संबंध रहे।

हम सब प्रकार की अभिवृद्धि चाहते हैं, लेकिन उसके साथ तीन मूलभूत बातें भी चाहते हैं :—

(1) हर मनुष्य का सृष्टि के साथ संबंध बना रहे। मनुष्य के जीवन का सबसे श्रेष्ठ, प्रकृति के साथ एकरूप होने का आनंद बना रहे।

(2) खेती के साथ जो भी उद्योग जोड़े जायें, उनमें किसी का शोषण न हो, किसी भी प्रकार की ऊंच-नीचता या विषमता न रहे।

(3) जो उत्पादन हो, उसका सम्यक विभाजन होना चाहिए। इस तरह सृष्टि के साथ सतत जीवित संबंध, शोषणरहितता और सम्यक विभाजन, तीनों बातें कायम रखकर हम गांवों को समृद्ध बनाना चाहते हैं। ❑

1 जनवरी : महादेव देसाई-जयंती
विनम्र स्मरणांजलि

मीठा झगड़ा

❑ **महादेव देसाई**

(मणिबहन) : *'यह तो भोग ही है न? सबको स्वतंत्र विचार करने का अधिकार है, अर्थात बड़े-छोटे स्वतंत्र विचार करने का अधिकार है तब बापू ने व्यर्थ ही उनके साथ चर्चा क्यों की? इस मामले में तो बापू से इतना अधिक सुनकर आने पर भी अभी कुछ बाकी रहा होगा, इस प्रकार दोनों बहनों को बातों से घड़ीभर की फुरसत नहीं। कल बात पूरी नहीं हुई दीखती, इसलिए आज फिर आराम से बातें करने बैठी हैं। इनकी तकली चलती रहे और साथ-साथ जीभ भी चलती रहे—तकली थके तो जीभ थके। फिर कातती हों तो मानो कैसी भी बातें करने का अधिकार मिल गया! इन्हें कुछ भी शर्म तो आती ही नहीं, फिर भी पीठ दूसरी तरफ है, इसलिए यहां रहकर सुनूं तो ठीक रहेगा।'*

(राधा और लक्ष्मी तकली चलाते हुए बातें करती बैठी हैं।)

लक्ष्मी : 'मैं तुझसे कहती नहीं थी कि बापू हमसे पूछे बिना नहीं रहेंगे? मैंने तो कल अपने साथ हुई बातें तुझसे कह दीं, आज अब तू सुना।'

राधा : 'क्या सुनाऊं? इस बार तो बापू ने हद कर दी है। इनका स्वभाव ऐसा है कि किसी मामले के दोनों पहलू खुद अच्छी तरह समझायेंगे, जिस पहलू पर खास जोर देना हो उस पर जोर देंगे और अपना मत भी बता देंगे। फिर कहेंगे : ''परंतु यह तो मेरा मत है। देखो, तुम तो तुम्हें जो लगे, वही कहो और करो।'' इस बार बापू ने ढंग बदला दीखता है। मुझसे कहा : ''तुम बड़ी हो गयी हो; मैं तुम्हारे मन को दबाना नहीं चाहता। तुम जिस स्वतंत्र विचार पर आओ, उसे बताओ। फिर मुझे जो कहना होगा, वह कहूंगा।''

लक्ष्मी : 'तो क्या तेरे साथ कुछ भी चर्चा नहीं की?'

राधा : 'नहीं; मुझे तो मुख्य बात इतनी ही कही कि तुम्हारे मन में परेशानी है, यह मैं जानता हूं। तुम स्वतंत्र विचार करने लग जाओ। तुम आपस में चर्चा करके बाद में अपने विचार बताओ। (लक्ष्मी खिलखिलाकर हंसती है) तेरे पेट में निश्चित रूप से कुछ पाप है। तूने अपनी बात मुझे पूरी नहीं कही। मुझे सच-सच बता, कल बापू ने तुझसे क्या कहा?'

लक्ष्मी : 'अंत में कुछ नहीं। बापू तो आंख के इशारे में हमारी बात समझ लेते हैं। हमारी बात वे समझ गये, इसीलिए हमारे स्वतंत्र विचार जानना चाहते हैं।'

राधा : 'तब तो तू अपना विचार कह आयी है, यही कहो न?'

लक्ष्मी : 'नहीं, नहीं। किन्तु बापू जान गये हैं।'

राधा : 'तो क्या मेरा विचार भी जान गये हैं?'

लक्ष्मी : 'हां, हां, मेरा और तेरा, दोनों का। उन्हें लगता है कि ये लड़कियां विवाह किये बिना नहीं रहेंगी।'

राधा : 'ऐं! तो क्या तूने निश्चय भी कर लिया है? मेरा साफ इनकार है। मैं बापू से कह दूंगी कि ''आपने ऐसा मान लिया हो, तो मेरे साथ अन्याय किया है।'' तूने क्या देखकर निश्चय किया, यह तो जानूं? तू इस तरह ठंडे दिल से बात कर रही है, जैसे अपने लिए तो किसी वर की तलाश कर रखी हो?'

राधा : 'यह तो ठीक; पर मिलने-न-मिलने पर मेरा विचार अवलंबित नहीं। मेरा मन तो कहता है कि मिले तो भी शादी न की जाय।'

लक्ष्मी : 'तो कब तक कुंआरी रहने का विचार कर रखा है?'

राधा : 'जब तक रहा जाय तब तक! और ईश्वर करे तो जब तक जिऊँ तब तक।'

लक्ष्मी : 'तो ऐसा लगता है कि तूने यह निश्चय किया है कि तुझे तो विवाह करने की भूख कभी नहीं लगेगी। शास्त्रकारों ने मां-बाप पर लड़की को कुंआरी न रखने का जो फर्ज डाला है, वह कुछ समझकर ही डाला होगा न? कन्यादान देना एक धर्म-ऋण माना गया और इस ऋण से मुक्त न होने वाले पिता का जीवन सदा ही अशांत रहता है, यह किसलिए?'

राधा : 'तू शास्त्रकारों की बात रहने दे। शास्त्रों में क्या लिखा है और क्या नहीं, यह जानने के आज थोड़े ही साधन हैं। शास्त्रों ने तो ऐसी भी पैरवी की है न कि 12-13 वर्ष की कन्या माता हो जाय?'

लक्ष्मी : 'यह तो तू विवाह करने की उम्र पर आ गयी, प्रश्न उम्र का नहीं। तुझे चाहिए तो तू 30 वर्ष की उम्र तक भले बैठी रहना। मुख्य बात यह है कि स्त्री का शरीर ही ईश्वर ने ऐसा बनाया है कि उसे यथासमय विवाह के बंधन में डालना ही अच्छा है। शास्त्रकारों ने स्त्री की रक्षा के लिए यह आज्ञा रखी दीखती है।'

राधा : 'स्त्री की रक्षा? हमारे शास्त्रकारों ने स्त्रियों के लिए शास्त्र बनाने का एकाधिकार प्राप्त कर लिया था, इसलिए उन्होंने तो अपनी ही रक्षा की। बेचारी स्त्री की रक्षा तो मैं कहीं भी नहीं देखती। *'न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति'* लिखने वाले भी ये ही हैं न?'

लक्ष्मी : 'इस प्रकार इनकी अवहेलना न कर। किसी समय शुद्ध शास्त्रों में झमेलियों ने अपने स्वार्थ से प्रेरित होकर कुछ श्लोक घुसेड़ दिये होंगे; परंतु नारी-पूजा का गौरव भी इन्हीं ने गाया है। स्त्री गृह-लक्ष्मी है, यह भाव तो तुम्हें जहां-तहां मिलेगा। शास्त्रकारों ने पुरुष होने के कारण अपनी रक्षा की, ऐसा कहने में भी अनुदारता ही है। हमारे शास्त्रकारों ने संयम, इंद्रिय-निग्रह और ब्रह्मचर्य पर जितना जोर दिया है, उतना जोर और किसी ने नहीं दिया होगा।

उन्होंने जब विद्यार्थियों के सामने ब्रह्मचर्य का उज्ज्वल आदर्श रखा, तो उन्हें पुरुषों का ही खयाल ज्यादा था। हम अनेक ब्रह्मचारी तपस्वियों के नाम सुनते हैं। ब्रह्मचारिणी का—एक भी कुमारिका का—नाम नहीं जाना। स्त्री की मनोरचना, स्त्री का शरीर, स्त्री का हृदय आदि सब वस्तुओं का विचार करके ही स्त्री के लिए विवाह को धर्म माना गया। पुरुष के लिए विवाह, धर्म नहीं माना गया।'

राधा : 'वाह रे गृह-लक्ष्मी! तेरा तो शास्त्र का अध्ययन बड़ा गहरा लगता है। मुझे तो कितनी ही सदिच्छा होने पर भी स्त्री को अधीन रखने का ही शास्त्रकारों का परम उद्देश्य लगता है। पुरुष के लिए ब्रह्मचर्य और स्त्री के लिए क्यों नहीं? पुरुष के शरीर में कौन-सी बिजली भरी है, जो उसे सुरक्षित रखती है और स्त्री को नहीं रखती? पुरुष के लिए संसार-वासना जीतना आसान और स्त्री लिए नहीं?'

लक्ष्मी : 'बिजली तो पुरुष के शरीर में नहीं, पगली स्त्री के शरीर में भरी है। इसीलिए स्त्री के लिए उसे बचाकर रखना कठिन है। सुंदर प्रेम-विवाह में मिल जाय तो उस विद्युत शक्ति के परिणाम अद्‌भुत होते हैं। हमारे महाब्रह्मचारी और वीर ऐसे ही जोड़ों की संतान थे। यह शक्ति अथवा वासना उल्टे रास्ते चली जाय, तो स्त्री को सीधा नरक का द्वार बताती है। एक भूल स्त्री के माथे पर स्थायी कलंक मढ़ देती है, जबकि पुरुष के लिए ऐसा नहीं।'

राधा : 'यह तूने ठीक कहा। इस प्रकार स्त्री की एक भूल ईश्वर माफ नहीं करता, मगर पुरुष की माफ करता है, ऐसी बात है? तब तो ईश्वर भी कोई-न-कोई पुरुष ही होना चाहिए।'

लक्ष्मी : 'तुझे तो आजकल प्रमाणशास्त्र के अध्ययन के कारण बहस की काफी आदत हो गयी है। ईश्वर को भी नहीं छोड़ेगी।'

राधा : 'तूने मुझे समझा नहीं। मैं ईश्वर पर दोषारोपण नहीं करती। मैं यह कहना चाहती थी कि ईश्वर ने स्त्री की एक भूल भी माफ न करने में ही स्त्री का गौरव बता दिया है। स्त्री की एक भूल माफ न हो, यह उसके लिए कुशल ही है। पुरुष की एक भूल शायद छिपी रहती है तो उसके लिए भ्रष्टाचार का मार्ग सदा खुला रहता है। एक भी भूल छिपी रहे, ऐसा हम क्यों चाहें? मैं तो यही चाहूंगी कि भूल और पाप की सजा फौरन मिले। किये पाप दूसरे जन्म में किसलिए भोगने पड़ें? इसी जन्म में स्वर्ग या नरक। तुरत दान महापुण्य।'

लक्ष्मी : 'तो अब तेरा कटाक्ष पुनर्जन्म पर आया। तेरी तो ईश्वर की रचना को उलट देने की...लगती है। बहन, यह बात मेरे बूते की नहीं। मेरी तो एक बात है। स्त्री को पति के बिना गति नहीं—*पतिरेव गतिः स्त्रीणाम्* लिखने में शास्त्रकारों का स्वार्थ नहीं था और न स्त्री को अधीन रखने की इच्छा थी। स्त्री को सुरक्षित कर देना ही उद्देश्य था।'

राधा : 'ईश्वर और शास्त्रकार दोनों से ही तेरा सीधा संबंध लगता है! परंतु कुछ विचार तो कर। *पतिरेव गतिः स्त्रीणाम्* पुरुष शास्त्रकारों ने लिखा। कोई स्त्री शास्त्रकार होती तो लिखती *स्त्री एव गति पतीनाम्।* कोई पुरुष किसी स्त्री की अथवा कोई स्त्री किसी पुरुष की गति नहीं, उद्धारकर्ता नहीं। एक प्रभु ही गति है। *पतिरेव गतिः* नहीं, परंतु *हरिरेव गतिः*—स्त्री या पुरुष दोनों के लिए हरि के सिवा और गति नहीं।'

लक्ष्मी : 'हरि तो गति है ही। पर स्त्री पर ईश्वर की कृपा अधिक है। पुरुषों को हरि को ढूंढ़ना पड़ता है, जबकि स्त्री के लिए तो पास में ही है। पति जैसे प्रभु घर में हों तो फिर दूसरे प्रभु को खोजने कहां जायं? पति में स्त्री अपना सर्वस्व अर्पण कर दे, तो उसका उद्धार हो गया। अनेक सतियों के नाम लेकर हम पावन हो जाती हैं। यह भी क्या बताता है? सतियां पति-परायणता से सती हुईं और आज भी जो स्त्री उनके मार्ग पर चलेंगी, उनको मुक्ति हस्तामलकवत् है। क्या कभी हम प्रातःकाल किसी कुमारी का नाम लेते हैं?'

राधा : इसका जवाब मैं पहले दे चुकी हूं। एक प्रथा पड़ी, एक लकीर बनी और उसे इतना गहरा कर डाला कि उसमें से बाहर निकला ही नहीं जा सकता। ऐसी रचना—सतियों के दृष्टांतों तक—एकपक्षीय लगती है। तो भूले-चूके गार्गी जैसी का नाम तो उपनिषदकारों द्वारा लिया जा चुका है। और अभी आगे जाकर कहूं? तो फिर चिढ़ेगी।'

लक्ष्मी : 'हां, हां। कहो न! मुझे अच्छी तरह समझ लेना है तेरा कहना।'

राधा : 'तो कहती हूं। ये सब सतियां भली सच्ची। परंतु इन सतियों का उद्धार हो गया, उन्हें मुक्ति मिल गयी, यह भी शास्त्रकारों की ही साक्षी है न? हमें उसे मानना ही पड़ेगा न? मैं स्वीकार करती हूं कि उन्होंने अपनी पति-परायणता के कारण अपनी गृहस्थी को सुशोभित किया। पर बाद में क्या? मुक्ति तो मिली मीराबाई को, जिसका मन मोहन में रमा। मीरां तो बालकुमारी ही कही जायेगी न? वे ब्याही-न-ब्याही समान थीं।'

लक्ष्मी : 'मीराबाई ने भजन बनाये तो उन्हें मुक्ति मिली और उन सतियों ने भजन न बनाये तो वे मुक्त नहीं थीं? सतियों के समय से हम इतने हजारों वर्ष दूर पड़ गये हैं कि आज उनके बारे में उनके सतीत्व की मीठी सुगंध के सिवा और कोई भी वस्तु हमारे पास नहीं रही। तुझसे एक बात पूछूं? मुझे तेरी छूत लगी है। तू उल्टा पूछती है तो मैं भी जरा उल्टा पूछूं। मीराबाई तो बेचारी विधवा हो गयी और रंड़ापे का भय मिटाने को उन्होंने गिरधारी लला को पति बनाया। परंतु मान लो कि मीराबाई को रंड़ापा न आया होता, तो क्या वे संसार छोड़कर भाग जातीं? वे भी सतियों में ही गिनी जातीं। वे बड़ी पतिपरायणा होतीं, इस बारे में तो मुझे शंका होती ही नहीं। हां, शायद तेरे जैसी के लिए "मोहन तेरे मुखड़े की माया लागी रे" जैसे भजन बनाने का शायद उन्हें अवकाश न मिला होता। पतिपरायण स्त्री को अपनी पति-सेवा और कुटुंब-सेवा से भजन बनाने की फुरसत नहीं रहती। बापू ने एक भी भजन नहीं बनाया। बापू को युगों के पश्चात् भजन के कारण लोग याद करेंगे अथवा उनके काम के लिए, सेवा द्वारा प्राप्त मुक्ति के लिए याद करेंगे।'

...क्रमशः अगले अंक में

हस्तक्षेप

जनता के दखल देने का समय आ गया है

❑ संतोष भारतीय

देश में सोची-समझी कुछ तकनीक अपनाई जा रही है। यह है लोगों के दिमाग को एक धारा में सोचने की तकनीक, एक दिशा में सोचने की तकनीक। लोगों को यह भरोसा दिलाने की भी कोशिश हो रही है कि ऐसा ही है, इसके अलावा कुछ है ही नहीं। अखबार पढ़ने की आदत लोगों की हो गयी। टेलीविजन में पहले समाचार आने पर लोग ध्यान से देखते थे क्योंकि उसमें कुछ खुलासे होते थे, कुछ तथ्यपरक सूचनाएं होती थीं, कुछ विश्लेषण होते थे, लेकिन अब ये सब मनोरंजन के अड्डे बन गये हैं। लोगों का ध्यान उस नई बाजीगरी की तरफ कम जा रहा है, इसलिए लोग इंटरटेनमेंट चैनल देख रहे हैं या जब न्यूज चैनल देखते हैं तो इंटरटेनमेंट चैनल की तरह देखते हैं।

अब कोशिश ये हो रही है लोगों को ये बतलाने की कि मौजूदा सरकार का दूर-दूर तक कोई विकल्प नहीं है। सरकार से मेरा मतलब प्रधान सेवक यानी मोदी जी से है। जिन 125 करोड़ लोगों की बात प्रधानमंत्री जी करते हैं, उनमें कोई ऐसा नहीं है जो प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी का विकल्प बन सके। ये सोच हमारा मीडिया, हमारे अखबार और सोशल मीडिया के जरिए लोगों के दिमाग में भरने की कोशिश हो रही है और लोग उस दिशा में सोच भी रहे हैं। उन्होंने कह रखा है कि विपक्ष एक तरीके से देश के विकास में बाधक है। विपक्ष बाधक नहीं है या देशद्रोही नहीं है तो देशभक्त भी नहीं है। ये भी लोगों के दिमाग में भरा जा रहा है। साथ ही ये भी भरा जा रहा है कि देश के बारे में खुद जनता यानी आप बिल्कुल न सोचें। देश के बारे में आप उतना ही सोचें, जितना हम सोचने की इजाजत दें।

2014 में जोर-शोर से गरजते-बरसते प्रचार रथ पर सवार होकर और वादों का खजाना खोलकर वर्तमान सरकार सत्ता में आयी। प्रधानमंत्री ने कहा कि मुझे प्रधानमंत्री नहीं, प्रधान सेवक समझिए। प्रधान सेवक जी, जिन वादों के रथ पर सवार होकर आये, अब पूरा सोशल मीडिया, टेलिविजन चैनल, अखबार लोगों से ये कह रहे हैं कि उन वादों को याद मत करो। सरकार के मंत्री नितिन गडकरी और पार्टी अध्यक्ष अमित शाह ने तो साफ कह दिया कि 'अच्छे दिन' एक फालतू का जुमला था। इस जुमले का कोई मतलब नहीं है और 15-20 लाख रुपये खाते में आने वाला वादा अमित शाह ने कह दिया कि जुमला है। जुमले का मतलब झूठ। हमने झूठ कहा था, आप लोग झूठ के ऊपर विश्वास मत करो जो हमने आपसे किये थे। लोगों ने सोचा कि अच्छे दिन का मतलब हमारे लिए नौकरियां हैं, अच्छे दिन का मतलब अच्छी सड़कें, पानी, शिक्षा और स्वास्थ्य है, तो कम से कम ये चीजें तो कुछ दिनों में होंगे न। जब मोदी जी कहते हैं कि पिछले 70 साल में कुछ नहीं हुआ, तो ये अपने तीन साल भी उसमें शामिल कर लेते हैं और अटल जी के छह साल भी शामिल कर लेते हैं। उन दिनों को भी याद नहीं करना चाहते जिस मोरारजी सरकार में अटल जी और आडवाणी जी मंत्री थे, वे उनको भी साफ कर देते हैं।

लोगों ने तो आपको इसलिए वोट दिया था कि इन 70 सालों में जो नहीं हुआ, कम से कम सड़क, बिजली, पानी, स्वास्थ्य और संचार इसमें आप कुछ करेंगे। हम कैशलेस और डिजिटल इंडिया की तरफ बढ़ गये, जिसका वादा चुनाव में शायद नहीं हुआ था, लेकिन हमारा मोबाइल फोन भी ठीक से नहीं चल रहा है। आज सवेरे मेरी किसी मंत्री जी से फोन पर बातचीत हो रही थी तो तीन बार फोन ड्रॉप हो गया। तो ये है हमारा कम्युनिकेशन सिस्टम। जिन चीजों के लिए आपको वोट दिया था, वो चीजें नहीं हुईं। कौन सी चीजें हो रही हैं, आप अच्छी तरह से जानते हैं। इस समय यही एक तरीका देश में चल रहा है। आपका दिमाग कुछ ऐसा बन जाये कि जो हम कहें, वही आप सोचो।

इस समय हम कह रहे हैं कि देश में 2019 में कोई विकल्प नहीं है, इसलिए हम 2019 की बात ही नहीं कर रहे हैं, हम 2022 की बात कर रहे हैं। आपको पूछने की जरूरत नहीं है कि हमने जो वादा किया था कि 2022 तक सबको छत मिल जायेगा, मकान मिल जायेगा वो किन्हें मिल जायेगा? बिल्डर्स समाचार के जरिए यह बता रहे हैं कि प्रधानमंत्री आवास योजना के तहत आप यहां इतने में घर ले लो, लेकिन ये खबरें किनके पास आ रही हैं? उन्हीं के पास जिनके पास घर है, जिनके पास पैसा देने की ताकत है, लेकिन वोट तो आपने उनसे लिये थे, जिनके पास पैसा देने की ताकत नहीं है, जिनके पास सिर्फ वोट देने की ताकत है। इस देश के 60 प्रतिशत लोगों को लगा था कि जिनके पास घर, खाने-पीने, पढ़ाई के साधन, माल न्यूट्रिशन की वजह से जो मर रहे हैं, उन्होंने

आपको इस उम्मीद में वोट दिया था कि उनको ये सारी चीजें मिलेंगी, लेकिन उनका जिक्र कहीं नहीं है तो फिर 2022 तक किनको मकान मिलेंगे वो जिनके पास मकान है या वो जो मकान लेकर दूसरी जगह किराये पर बेच देंगे, लेकिन इस देश के गरीब के पास मकान मिलने का साधन क्या है? यह अब तक न सरकार और न ही बैंकों ने बताया है। बैंक की जितनी स्कीम निकली है, उसमें लोअर क्लास के जितने लोगों ने अप्लाई किया है, कम से कम 15-20 लोगों को मैं जानता हूं, उनका तो नंबर ही नहीं आया। इसका मतलब कि डिजिटल इंडिया में भी कम्प्यूटर को मैनेज करने के तरीके निकल आये हैं और तरीके क्यों नहीं निकलेंगे जब आधार कार्ड के आधार पर 40 लाख रुपये लोगों के एकाउंट से निकल गये और सरकार ने उसकी कोई जिम्मेदारी नहीं ली। वे लोग रो रहे हैं। थोड़े दिन में बहुत सारे लोग इस आधार के चक्कर में रोयेंगे, जिनके एकाउंट खाली होंगे, वे आत्महत्या भी करेंगे। अब तक तो किसान करता रहा है और अब तो व्यापारी भी करने लगे हैं। एक बिल्डर्स ने आत्महत्या की है। ये स्थिति क्यों आयी, क्या इसी के लिए ये सरकार चुनी गयी थी? पर सरकार कहती है या हमारा प्रचार तंत्र कहता है कि इसके बारे में सोचो ही मत, सिर्फ ये सोचो कि देश में कोई विकल्प नहीं है।

दूसरी तरफ विपक्ष नाकारा दिखायी देता है, वे लोग गायब हो गये, जिनमें अटलबिहारी वाजपेयी, आडवाणी और चंद्रशेखर, वीपी सिंह, डॉ. लोहिया व जयप्रकाश नारायण की सोच वाले गायब हो गये। अटल जी तो बीमार हैं, बेचारे बोल नहीं सकते हैं, आडवाणी जी को तो कूड़ेदान में डाल दिया, वे भी मूक समान ही हैं, बाकी लोग हमारे बीच में हैं नहीं। अगर आज ये जिन्दा होते तो शायद उन्हें भी कोई न कोई मंत्री या कोई न कोई पार्टी का नेता, जो सत्ता में है या जो सत्ता में और ज्यादा अपनी तरक्की चाहता है, वो उन्हें देशद्रोही के आसपास खड़ा कर देता। इसका मतलब हम क्या यह निकालें कि ये देश पार्टी सिस्टम को तोड़ना चाहता है या पार्टी सिस्टम को टूटना चाहिए। राजनीतिक पार्टियां जनता की समस्याओं को सामने लेकर नहीं आ रही हैं। राजनीतिक पार्टियों के संगठन उन वर्गों की तकलीफ को भी सामने नहीं लेकर आ रहे हैं, जो वर्ग इन अनुषांगिक संगठनों के सदस्य हैं, जैसे किसान, मजदूर और शिक्षक। इनकी बात सामने नहीं आ रही है, पर संगठन हर पार्टी के हैं। क्या हमारा पॉलिटिकल सिस्टम अप्रासंगिक हो चुका है? क्या इसके विरोधाभास इतने बढ़ गये हैं कि अब देश के लोगों को सोचना चाहिए कि अगर सत्ता में ऐसे लोग नहीं आये, जिनके सामने देश का पूरा खाका हो, तो ये देश और ज्यादा समस्याग्रस्त होता चला जायेगा।

वर्ल्ड बैंक की नई रिपोर्ट, जिसका शोर अखबारों और टेलीविजन में है, हॉक्स है, झूठ का पुलिंदा है। वर्ल्ड बैंक की है भी कि नहीं या वर्ल्ड बैंक में जो हमारे हिन्दुस्तान के कई लोग गये हैं या वर्ल्ड बैंक में उनको जान-बूझकर जगह दी गयी है, यह उनकी कारिस्तानी है। इस कारिस्तानी से क्या देश आगे बढ़ेगा, आपकी थाली में रोटी आयेगी, कोई बच्चे को नौकरी मिलेगी, आपके घर के बीमार को इलाज मिलेगा? इलाज के लिए झोली भरकर पैसे चाहिए, किसी बड़े या छोटे अस्पताल में जायेंगे तो फिर लाशें ही बाहर आती हैं, आदमी तो बाहर नहीं आता। क्या इसी स्थिति से उबरने के लिए वोट दिया था, पर स्थिति और बदतर हो गयी है। तो क्या समय आ गया है कि कोई अच्छा साहित्यकार, कोई अच्छा लेखक, कोई अच्छा मजदूर नेता, कोई अच्छा पत्रकार, कोई अच्छा उद्योगपति, जिसके दिमाग में देश का पूरा नक्शा हो, जिसके दिमाग में देश के हर वर्ग के लिए कोई न कोई नक्शा हो, कोई ऐसा व्यक्ति जो इस देश को सचमुच आगे बढ़ाने की सोचे न कि एक गुट को आगे बढ़ाने की, जो देश को सही लोकतांत्रिक स्थिति में ले जाये, क्या ऐसे लोगों को लेकर देश को नहीं सोचना चाहिए कि हमें अपनी सत्ता व्यवस्था में इन लोगों को भी शामिल करना चाहिए।

वक्त आ गया है कि हम देश के संपूर्ण राजनीतिक स्तम्भ के बारे में नये सिरे से सोचें। अगर नहीं सोचेंगे तो हम बैडमिंटन की तरह दो लोगों के बीच में गेंद को आता हुआ देखेंगे, जाता हुआ देखेंगे। हम बैठकर सिर्फ तमाशबीन के रूप में ताली बजायेंगे। हमारा कोई भला नहीं होने वाला है। जीतेगा जो उसको पैसा, जो हारेगा जो उसको पैसा, लेकिन देखने वाले सूखे-सूखे। अब देश के लोगों को जो लॉलीपॉप दिखाये गये, उस पर बातचीत करने वाले लोगों पर खतरा आ गया है। अब कांग्रेस और मौजूदा समय का एक अंतर है। उस समय आप सरकार की या सरकार से जुड़े व्यक्तियों की आलोचना कर सकते थे, लोगों को कम्युनिकेट कर सकते थे। आज अगर आप आलोचना करेंगे तो गिरफ्तार कर लिये जायेंगे। अगर आप आलोचना करेंगे तो राजस्थान सरकार की तरह, जो भारतीय जनता पार्टी की सरकार है, एक ऐसा अध्यादेश लायेगी, जिस पर भारतीय जनता पार्टी ने सांस तक नहीं ली, उफ तक नहीं की। इस अध्यादेश के तहत आप किसी भी विधायक, सांसद, मंत्री या अधिकारी के खिलाफ एफआईआर नहीं करा सकते।

ये जो सारी नई चीजें हमारी सोसायटी में इंट्रोड्यूस हुई हैं, यानी भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था में इंट्रोड्यूस की जा रही हैं, ये लोकतांत्रिक नहीं हैं। लेकिन लोकतंत्र के नाम पर इंट्रोड्यूस की जा रही हैं। इसका मतलब खोटे सिक्के को असली सिक्के के नाम पर चलाने की कोशिश हो रही है। इस स्थिति का विरोध करने के लिए वे पार्टी सिस्टम सक्षम नहीं है, इसलिए एक्स्ट्रा→

हाथ से न छोड़ें विवेक की लगाम

❑ विश्वनाथ सचदेव

उच्चतम न्यायालय ने कहा है, 'सरकार दर्शकों की उग्रता पर काबू न कर पाने का तर्क नहीं दे सकती। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करना सरकार का कर्तव्य है।' यह बात 28 साल पहले, 1989 में, एक फिल्म पर हुए विवाद के संदर्भ में कही गयी थी। तब तमिलनाडु सरकार ने एक तमिल फिल्म 'ओरे ओरु ग्रामथिले' के प्रदर्शन पर रोक लगा दी थी। फिल्म में जाति आधारित आरक्षण का विरोध किया गया था और राज्य को कुछ राजनीतिक गुटों ने हिंसा की धमकी दी थी। सरकार इस धमकी के आगे झुक गयी थी। तर्क दिया गया था कि राज्य में हिंसा फैलने का डर है और स्थिति संभालना मुश्किल हो सकता है। तब न्यायालय ने कहा था कि सरकार किसी विषय पर खुली बहस और अभिव्यक्ति पर प्रतिबंध नहीं लगा सकती, भले ही सरकार की नीतियों की कैसी भी आलोचना क्यों न हो।

'पद्मावती' फिल्म को लेकर उठाये गये विवाद में उक्त तमिल फिल्म के संदर्भ में न्यायालय का रुख बहुत कुछ कह देता है। विवादों के घेरे में फंसी पद्मावती' अभी सेंसर बोर्ड ने नहीं देखी है। उसने कोई निर्णय भी नहीं दिया है। फिर भी बिना फिल्म देखे ही राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश (अब बिहार भी) जैसे राज्यों ने सिनेमाघरों के फिल्म के दिखाये जाने पर प्रतिबंध लगा दिया है। यह सही है कि फिल्म को लेकर समाज के एक तबके में काफी रोष है; फिल्म से जुड़े लोगों की नाक और गला काटने की धमकियां दी जा रही हैं; सिनेमाघरों को चेतावनियां दी जा रही हैं; भावनाओं पर आघात की दुहाई दी जा रही है। लेकिन इन सब बातों को आधार बनाकर राजनीतिक दल और कुछ राज्यों की सरकारें जिस तरह की प्रतिक्रिया दे रही हैं, वह ज्यादा चिन्ताजनक बात है, क्योंकि जातीय अस्मिता के नाम पर असहिष्णुता का माहौल पैदा हो रहा है।

फिल्म निर्देशक को जितनी स्वतंत्रता है, उतनी ही स्वतंत्रता दर्शकों के भी अपनी प्रतिक्रिया देने की है। लेकिन, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार असीमित नहीं है। विवेक की सीमाओं के भीतर ही इस अधिकार का उपयोग होना चाहिए। विवेक का तकाजा है कि हम दूसरों की भावनाओं का सम्मान करें और इसी विवेक की मांग यह भी है कि भावनाओं के नाम पर कोई अपने स्वार्थों की रोटियां न सेंके।

फिल्म 'पद्मावती' से जुड़े लोगों और कुछ पत्रकारों के सिवाय, जिन्हें फिल्म निर्माता ने अपनी फिल्म दिखानी चाही, किसी ने यह फिल्म अभी देखी नहीं है। जिन्होंने फिल्म देखी नहीं है, वह यह भी नहीं जानते कि फिल्म इतिहास पर आधारित है या कवि की कल्पना पर। पहले इस अफवाह पर फिल्म के निर्माण में बाधा डाली गयी थी कि इसमें महारानी पद्मिनी और खिलजी के प्रेम-प्रसंग को दिखाया गया है और अब शिकायत यह है कि एक राजपूत महारानी को नृत्य करते दिखाया जाना राजपूती परंपरा और स्वाभिमान के विरुद्ध है।

अपने इतिहास, अपनी परंपराओं, आदि पर गर्व करना गलत बात नहीं है, लेकिन इतिहास और परंपरा के नाम पर विवेक की लगाम को अपने हाथ से छोड़ देना भी सही नहीं है। इस विवाद के संदर्भ में आज देश में जो कुछ हो रहा है, वह हमारे वर्तमान और भविष्य दोनों के लिए चिन्ता और चिन्तन का विषय है। दरअसल, गड़बड़ी तभी होती है, जब हम दूसरे की भावनाओं की चिन्ता नहीं करते या कानून अपने हाथ में लेने को अपना अधिकार मान लेते हैं।

जहां तक फिल्म 'पद्मावती' का सवाल है, सेंसर बोर्ड और आवश्यकता पर न्यायालय के निर्णय की प्रतीक्षा की जानी चाहिए। उम्मीद की जानी चाहिए कि अभिव्यक्ति की आजादी के नाम पर किसी की

→पार्लियामेंट्री अपोजिशन की जरूरत है, यानी जनता अपनी बात कहे और सिचुएशन में हस्तक्षेप करे। इसको कौन करेगा? इसको आप करेंगे, आपको करना चाहिए, ये मैं सोचने के लिए कह रहा हूं। किसी नयी राजनीतिक पार्टी के बारे में मत सोचिए। ऐसे लोगों के बारे में सोचिए जो आपके सामने हों, देश के बहुत सारे लोग आपके सामने हैं। यह छात्र, नौजवान, मजदूर नेता, शिक्षक, प्रोफेसर, उद्योगपति, पत्रकार या ब्यूरोक्रेट कोई भी हो सकता है, जो ईमानदार हो, और जिसके सामने देश का नक्शा हो। इनमें से तलाशिए कि कौन लोग हैं जो देश में एक अच्छी योजना लेकर देश को आगे बढ़ाने की कोशिश कर सकते हैं। ❑

भावनाओं को ठेस पहुंचाने का काम नहीं किया गया है। दूसरी तरफ, जो कुछ विरोध के नाम पर देश में हो रहा है, वह असंवैधानिक तो है ही, जनतांत्रिक मूल्यों का नकार भी है। जिस तरीके से कुछ राज्यों की सरकारों ने इस अनदेखी फिल्म पर प्रतिक्रियात्मक कार्रवाई की है, उसमें भी राजनीतिक स्वार्थों की रोटियां सेंकने की गंध आ रही है।

अदालत ने उस ऐतिहासिक निर्णय में कहा था—सिनेमा सामान्य चिन्ता के विभिन्न विषयों को उठाने का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और कानून-सम्मत माध्यम है। सिने निर्माता का अधिकार है कि वह अपना संदेश दर्शकों तक पहुंचाये—भले ही किसी पक्ष को उस संदेश पर आपत्ति हो।' अभिव्यक्ति के अधिकार के संदर्भ में न्यायाधीशों ने कहा था, 'अभिव्यक्ति के अधिकार की रक्षा का क्या अर्थ है, यदि सरकार उसकी रक्षा नहीं करती।' अदालत ने धमकियों के आगे सरकार के झुकने को 'भयादोहन' के सामने घुटने टेकना कहा था।

जनतांत्रिक अधिकारों और संवैधानिक मर्यादाओं की दृष्टि से इस तरह घुटने टेकना और घुटने टिकवाना, दोनों अपराध हैं। सभ्य व सुसंस्कृत समाज में ऐसे अपराधों के लिए कोई जगह नहीं होनी चाहिए। रहा सवाल 'खिलवाड़' का, तो इतिहास और संवैधानिक अधिकार दोनों के साथ खिलवाड़ नहीं होना चाहिए। जनतांत्रिक मर्यादाओं और कानून के शासन का तकाजा है कि कुछ भी कहने और करने से पहले उसे विवेक के तराजू पर तौला जाये। हम सबका साझा अतीत है, साझा इतिहास है, साझी परम्पराएं हैं। इस साझी विरासत का सम्मान हम सबको मिलकर करना है। यह काम भावनाओं में बहकर नहीं, विवेक के आधार पर होना चाहिए। असहमतियों के विवाद धमकियों से नहीं, विचार-विमर्श से सुलझते हैं। यही न्यायोचित है। मानवोचित भी। ❑

पुनर्मुद्रण लेकिन महत्त्वपूर्ण पुस्तकों का प्रकाशन

प्रकाशन द्वारा पूर्व में प्रकाशित महत्त्वपूर्ण पुस्तकों को पुनर्मुद्रित करने का कार्य प्राथमिकता के साथ किया जा रहा है। इसी क्रम में आचार्य विनोबा की पुस्तक **'उगते तारे, खिलते फूल'** एवं आचार्य राममूर्ति की पुस्तक **'गांव का विद्रोह'** को पुनर्मुद्रित किया गया है। कृपया इन चुनिन्दा पुस्तकों का क्रयादेश प्रकाशन को देकर विचार-प्रचार के कार्य में सहयोग करें।

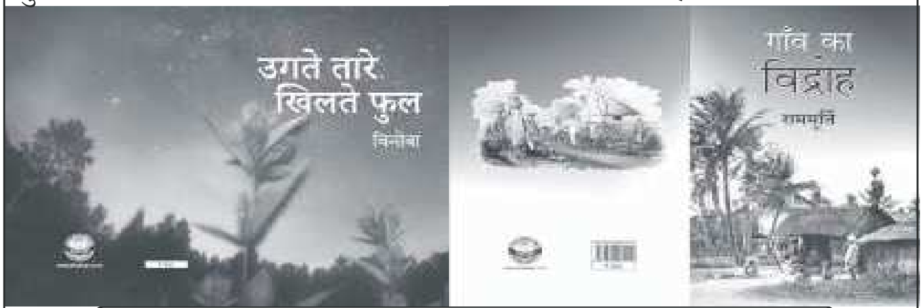

पंचायतीराज–ग्राम स्वराज सेट उपलब्ध है

पंचायतीराज–ग्राम स्वराज सेट उपलब्ध है

सर्व सेवा संघ प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तकों में से 'पंचायतीराज-ग्राम स्वराज' शीर्षक से 10 चुनिन्दा पुस्तकों का सेट तैयार किया गया है। पंचायती राज व्यवस्था को राज्य के विस्तार के बजाय जनता की जीवन्त एवं सक्रिय इकाई में रूपांतरित करने की प्रक्रिया को गति एवं गहराई देने के संदर्भ में पुस्तकें अत्यंत उपयोगी हैं। इस सेट में गांधी, विनोबा, जयप्रकाश नारायण, धीरेन्द्र मजूमदार एवं आचार्य राममूर्ति जी की पुस्तकें शामिल हैं। अत्यन्त कम कीमत अर्थात मात्र 350/- रुपये में घर बैठे यह सेट आपको उपलब्ध होगा।

सेट में शामिल पुस्तकें

क्रम	पुस्तक	लेखक	मूल्य	पृ. सं.
1.	गांव-गांव में स्वराज्य	विनोबा	15/-	32
2.	पंचायती राज	गांधी	15/-	48
3.	ग्राम-स्वराज्य	गांधी	60/-	264
4.	सामुदायिक समाज : रूप और चिन्तन	जयप्रकाश नारायण	15/-	136
5.	ग्राम-स्वराज्य	विनोबा	45/-	120
6.	भारतीय राज्य व्यवस्था की पुनर्रचना	जयप्रकाश नारायण	15/-	112
7.	गांव आंदोलन क्यों?	डॉ. जे. सी. कुमारप्पा	50/-	168
8.	लोकस्वराज	जयप्रकाश नारायण	10/-	48
9.	गांव का विद्रोह	आचार्य राममूर्ति	60/-	112
10.	समग्र ग्राम सेवा की ओर	धीरेन्द्र मजूमदार	120/-	534

नोट : पुनर्मुद्रण के पश्चात् सेट की कीमत बढ़ सकती है।

पता : सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-221001 (उत्तर प्रदेश)

फोन : 0542-2440385/2440223 **–अरविन्द अंजुम,** संयोजक

संस्थाओं की खींचतान से नुकसान

❑ सुभाष कश्यप

संविधान दिवस के मौके पर आयोजित कार्यक्रम में कानून मंत्री रविशंकर प्रसाद और सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस दीपक मिश्रा के बीच बातचीत में कार्यपालिका और न्यायपालिका के अधिकारों को लेकर जो तकरार देखने में आया, उस पर टिप्पणी करना मैं उचित नहीं समझता। मैं बस इतना ही कहूंगा कि न्यायपालिका और विधानपालिका जैसे लोकतंत्र के प्रमुख अंकों के बीच खींचतान बेहद दुर्भाग्यपूर्ण है। वह खींचतान चाहे जिस किसी मामले को लेकर हो। दरअसल, एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप से तभी बचा जा सकता है, जब हम न सिर्फ अपने अधिकारों को समझें और उनका पालन करें, बल्कि दूसरे के अधिकारों को भी समझें और उनका सम्मान करें। यही न्याय के तंत्र का तकाजा भी है और लोकतंत्र की जरूरत भी है। जैसा कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने कहा है कि विधानपालिका, न्यायपालिका और कार्यपालिका, ये तीनों एक ही परिवार का हिस्सा हैं, इसलिए इन तीनों को एक-दूसरे के खिलाफ नहीं, बल्कि एक-दूसरे को मजबूत करने के लिए काम करना चाहिए। हर एक को अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ते हुए दूसरे के अधिकारों का भी ख्याल रखना होगा। प्रधानमंत्री की यह बात सही है।

अब अगर बात संवैधानिक अधिकारों की करें, तो मैं संविधान के एक विद्यार्थी होने के नाते यह कह सकता हूं कि संविधान ही सर्वोपरि है और संविधान से ऊपर केवल देश की जनता है, जिसके हितों की या जिसके मौलिक अधिकारों की अनदेखी किसी को भी किसी भी हाल में नहीं करनी चाहिए। संवैधानिक अंगों के आपसी खींचतान और असंवैधानिक निर्णयों या आदेशों से सबसे ज्यादा नुकसान जनता का होता है और उसके मौलिक अधिकारों का हनन होता है।

किसी भी लोकतंत्र के लिए उसका संविधान और उसमें दर्ज प्रावधानों-अधिकारों की बेहद महत्ता होती है, जिसका सम्मान और पालन करना हमारा कर्तव्य होना चाहिए। संविधान में विधानपालिका, न्यायपालिका और कार्यपालिका, इन तीनों के अधिकार क्षेत्र स्पष्टतया परिभाषित और परिसीमित हैं। इन तीनों के अपने-अपने कार्यक्षेत्र हैं और इनके अपने-अपने मूल दायित्व भी हैं। इसलिए यह जरूरी है कि ये तीनों अपने-अपने अधिकार क्षेत्र के अंदर रहकर ही अपने दायित्वों का निर्वाह करें और इससे भी ज्यादा जरूरी है कि कोई किसी के अधिकार क्षेत्र में दखल न दे। इनमें से कोई भी अगर अपने अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन करता है या दूसरे के अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप करता है, तो ऐसा करना असंवैधानिक है। चाहे विधानपालिका हो, चाहे न्यायपालिका हो या फिर कार्यपालिका हो, हमारा संविधान जिस काम के लिए उन्हें अधिकार नहीं देता, उसे करना संविधान के विरुद्ध माना जायेगा। यह बात भी ध्यान रहे, असंवैधानिक निर्णयों या आदेशों को मानने के लिए कोई भी बाध्य नहीं है।

विधानपालिका, न्यायपालिका और कार्यपालिका हमारे लोकतंत्र के तीन प्रमुख अंग हैं। इनमें से कोई भी अगर अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जाकर या दूसरे पर किसी तरह का दबाव बनाने का काम करेगा, तो यह लोकतंत्र के लिए न सिर्फ घातक होगा, बल्कि इससे लोकतंत्र की सफलता भी संदिग्ध हो जायेगी। यह बेहद दुखद है कि ऐसी स्थिति देश में कभी-कभी उत्पन्न होती रही है। दरअसल, खींचतान की वजह ही यही है कि कोई न कोई अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जा रहा है। ऐसी स्थिति में लोकतंत्र का सुचारू रूप से चलना और न्यायतंत्र का मजबूत होना एक संदेह के घेरे में आ जायेगा। अगर न्यायपालिका कोई ऐसा आदेश पारित करती है, जो असंवैधानिक हो और संसदीय सरकार इसे नहीं मानती, तो भी यह भयावह स्थिति होगी। क्योंकि एक तरफ तो विधायिका किसी भी असंवैधानिक आदेश को मानने के लिए बाध्य नहीं है। वहीं दूसरी तरफ, अगर सुप्रीम कोर्ट के निर्णयों को नहीं माना जायेगा, तो इससे अराजकता की स्थिति पैदा होगी। इसलिए जरूरी है कि तीनों अंग अपने अधिकारों की सीमा समझें, ताकि संविधान की गरिमा को कोई चोट न पहुंचने पाये।

बीते कुछ समय से देखा गया है कि कार्यपालिका किसी मामले को लेकर न्यायपालिका पर दबाव बनाती रही है, तो वहीं न्यायपालिका भी तमाम लंबित मामलों को निबटाने की जगह कार्यपालिका के अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप करती रही है। यहां सवाल उठता है कि ये दोनों ही अगर असंवैधानिक काम करने लगें, संवैधानिक शक्तियां अपने पास लेने का प्रयास करने लगें, तो फिर न्याय के लिए क्या संवैधानिक विकल्प रह जाते हैं। न्यायपालिका के निर्णयों का संशोधन हर हाल में सरकार को ही करना पड़ता है। मैं समझता हूं कि यह भयावह स्थिति होगी और ऐसे में लोकतंत्र की शीर्ष संस्थाओं के मूल्यों का अवमूल्यन ही होगा। इस स्थिति से देश में अराजकता को पांव फैलाने का न्योता मिलेगा।

सरकार और न्यायपालिका की खींचतान से न्यायतंत्र के प्रति लोगों का भरोसा उठता है। क्योंकि, जनता के पास सबसे आखिरी हथियार न्यायतंत्र ही है। इसलिए मौजूदा सरकार और न्यायपालिका से हम यह उम्मीद करते हैं कि ये दोनों कम-से-कम जनता के भरोसे को हर हाल में बनाये रखें। जनता का भरोसा टूटने से उसमें अपने मौलिक अधिकारों के हनन का डर बढ़ने लगता है, जिससे लोकतंत्र तो कमजोर होता ही है, लोकतांत्रिक संस्थाएं भी संदेह के घेरे में आ जाती हैं। ❑

12 जनवरी : राष्ट्रीय युवा दिवस

युवाओं को मौका दें राजनीतिक दल

❑ **वरुण गांधी**

ऑस्ट्रिया के नये चांसलर सेबेस्टियन कुर्ज सिर्फ 31 साल के हैं, न्यूजीलैंड की नयी प्रधानमंत्री जैसिंडा अर्डर्न की उम्र सिर्फ 37 साल है और वह दुनिया की सबसे युवा महिला नेत्री हैं। टोनी ब्लयेर और डेविड कैमरन दोनों 43 की गरिमामय उम्र में प्रधानमंत्री बने। एमैनुअल मैक्रों 39 की उम्र में फ्रांस के राष्ट्रपति हैं। दुनिया में किसी राजनीतिक दल की औसत आयु सिर्फ 43 साल है—ऐसे में जिस तरह मतदाता खंडहर राजनीतिक दलों से ऊब रहे हैं, ये दल अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए लगातार नये खून को अपने साथ जोड़ रहे हैं और उन्हें आगे बढ़ा रहे हैं।

अब जरा भारत पर नजर डालिये, तो राजनीतिक दल अपनी बुजुर्गियत और वरिष्ठता की स्वामिभक्ति के साथ ठहरे से हैं। वर्ष 2014 में मौजूदा संसद में सिर्फ 12 सांसद 30 साल से कम उम्र के थे, इसके सिर्फ 53 फीसद सदस्य 55 साल से कम के थे, जबकि एक सांसद की औसत उम्र 50 साल से ऊपर (भाजपा में 54 और कांग्रेस में 57) थी। एक तरफ हमारी आबादी (देश की औसत उम्र का मध्यांक 25 है) लगातार युवा होती जा रही है, दूसरी तरफ संसद बुढ़ाती जा रही है—पहली लोकसभा की औसत आयु 46.5 साल थी, जो दसवीं लोकसभा तक बढ़कर 51.4 साल हो गयी। नेता सेवानिवृत्ति की उम्र पार कर जाने के बाद भी वानप्रस्थ का कोई इशारा दिये बिना सत्ता की डोर थाम होते हैं। इधर बाकी तब तक कुर्सी थामे रहते हैं, जब तक कि उनका उत्तराधिकारी इसके लिए तैयार ना हो जाये। लगता है कि राजनीतिक सशक्तीकरण बुजुर्गों का एकाधिकार है।

लेकिन इसके अपवाद भी रहे हैं, कुछ युवा नेताओं को जिम्मेदारी के पद दिये गये। हालांकि, ये गिने-चुने मामले ही हैं, और ज्यादातर मामलों में ऐसा मुख्यतः राजनीतिक विरासत के चलते हुआ। मैं, खुद भी मुद्दतों से चली आ रही इस प्रथा का लाभार्थी हूं।

ऐसा भी नहीं कि राजनीतिक दल युवाओं को शामिल नहीं करते—ज्यादातर दलों की युवा और छात्र इकाइयां हैं, लेकिन इनकी राजनीति में तरक्की प्रत्यक्षतः सीमित है। कुछ दलों में अनौपचारिक रूप से 75 साल सेवानिवृत्ति की उम्र तय करना स्वागत योग्य है, लेकिन फिर भी बहुत कुछ करने की जरूरत है।

संघर्षरत युवाओं को मजबूत बनाने के और भी रास्ते हैं। दक्षिण यूरोपीय देश सर्बिया कई वर्षों का एक 500 युवा राजनीतिक नेता प्रोग्राम चलाता है, जिसके तहत देश में लोकतंत्र के पुनरुद्धार के लिए युवा नेताओं की खोज करके युवा राजनीतिक नेतृत्व को प्रश्रय दिया जाता है। यूरोपीय कमीशन, रॉकफेलर फंड और अन्य संस्थाओं से पैसा पाने वाले इस प्रोग्राम में अलग-अलग पृष्ठभूमि वाले युवाओं को राजनीतिक प्रशिक्षण मुहैया करा युवा नेताओं का नेटवर्क बनाया जाता है, जो पार्टी रुख से परे नीतिगत समाधान पेश कर सकें और सत्ता प्रतिष्ठान के दरवाजे आमजन के लिए खोल सकें, इस प्रोग्राम से युवा दलों में एकराय बनाने के साथ ही पार्टियों की नीतियों पर प्रभाव छोड़ सके।

यूएनडीपी ने 26 लाख डॉलर के फंड से एक राष्ट्रीय युवा नागरिक शिक्षा अभियान चलाया, जिसका मकसद नागरिक समझदारी व कौशल का विकास करना है और राजनीति में युवाओं के दखल को लेकर परंपरागत रवैये में बदलाव लाना है। केन्या में नेशनल डेमोक्रेटिक इंस्टीट्यूट (एनडीआइ) साल 2001 से एक युवा राजनीतिक नेतृत्व अकादमी को मदद करती है, जहां सभी दलों के युवा नेता अपने दलों में लागू की जाने वाली परियोजनाओं के साथ संधि वार्ता और जनसमर्थन विषय पर कौशल विकास प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं।

यूनिसेफ ने कोसोवो में 2010 से 2013 के बीच इनोवेशंस लैब के लिए फंड दिया, जिसमें भावी नेताओं को मेंटर के साथ ही जरूरी सुविधाएं व सरकार में संस्थागत संपर्क मुहैया करवा कर सामाजिक रूप से प्रभाव छोड़ने वाले उनके आइडिया का चयन किया जाना और उनको लागू किया जाना था। यूएनडीपी ने युवा एशियाई नेताओं की नेतृत्व क्षमता विकसित करने के लिए राष्ट्रीय और क्षेत्रीय वर्कशॉप के माध्यम से 2007 और 2009 के बीच एशियन यंग लीडर्स प्रोग्राम चलाया।

संस्थागत समर्थन से भी हमें काफी मदद मिल सकती है। बहुत से देश (उदाहरण के लिए मोरक्को, पाकिस्तान, केन्या, इक्वाडोर) ने अपनी विधायिका में युवा नेताओं के लिए अलग से सीटें सुरक्षित कर रखी हैं—आखिरकार समुदाय और जाति आधारित समूहों को आरक्षण दिया जा सकता है, तो युवाओं को क्यों नहीं दिया जा

सकता? अन्य देशों (इक्वाडोर, एल साल्वाडोर, सेनेगल, युगांडा, बुरुंडी) ने सभी विधायिकाओं में उम्मीदवारी की उम्र घटाकर 18 साल कर दी है। बोस्निया में यदि चुनाव में किसी प्रत्याशी को बहुमत नहीं मिलता, तो वहां के चुनाव कानून के आर्टिकल 13.7 के तहत सबसे युवा उम्मीदवार को वह सीट दे दी जायेगी।

केन्द्रीय अमेरिकी देश एल साल्वाडोर 18 साल की उम्र के करीब पहुंच रहे लोगों को जिम्मेदारी संभालने के लिए प्रोत्साहित करने को स्कूलों में सक्रिय रूप से अभियान चलाता है। केन्या ने एक राष्ट्रीय युवा नीति (2006) और राष्ट्रीय युवा अधिनियम (2009) बना रखा है। इन दोनों का मकसद युवाओं को चुनावों में ज्यादा भागीदारी के लिए प्रोत्साहित करना है। साथ ही, हमारे राजनीतिक ढांचे को राजनीतिक सशक्तीकरण के लिए कई मौके मुहैया करना चाहिए—स्थनीय निकाय और पंचायत चुनावों में उन नेताओं को मौका दिया जाना चाहिए, जिन्होंने जमीनी स्तर पर काम किया है; ऐसे नेताओं में कुछ अनुभव होने के बाद राज्य विधानसभा चुनाव लड़ना चाहिए और अंत में लोकसभा के लिए, आखिर स्वस्थ लोकतंत्रों में ऐसे ही तो नेता बनते हैं।

पार्टियों में आंतरिक लोकतंत्र में गिरावट, बढ़ता चुनावी खर्च और स्थानीय निकाय, पंचायत और मेयर चुनाव में आरक्षण ने युवा नेताओं के आगे बढ़ने में रुकावटें डाल दी हैं। राजनीतिक दलों को गैर-राजनीतिक पृष्ठभूमि से आने वाले उम्मीदवार युवाओं को कुछ पदों पर आरक्षण दिये जाने के साथ ही मुख्य धारा की राजनीति में प्रोफेशनल्स को शामिल करने के मुद्दे पर सक्रियता से विचार करना चाहिए। युवा नेता विशाल युवा आबादी वाले भारत की जरूरतों और ख्वाहिशों को समझते हैं। दलों को ऐसे नेताओं को अपनी प्रतिभा के बल पर आगे बढ़ने का मौका मुहैया कराना चाहिए। ❑

गतांक से आगे...

भारत की कृषि : समस्या व समाधान

❑ **अविनाश काकड़े**

वर्तमान माननीय नरेन्द्र मोदी सरकार के फसल कर्ज की नीति व क्रियान्वयन की कमी का परिणाम फसल कर्ज की लक्ष्य-पूर्ति काफी कम रही, यह स्पष्ट दीखता है। 2016-17 में केन्द्र सरकार ने 9 लाख करोड़ फसल कर्जे का लक्ष्य रखा था, लेकिन प्रत्यक्ष में 7 लाख 55 हजार 995 करोड़ रकम ही किसानों के कर्ज के लिए वितरित हो सकी।

Agriculture Credit Flow (in crore)

Sl.	Year	Target	Achivement
1.	2013-14	7,00,000	7,11,621
2.	2014-15	8, 00,000	8,45,328
3.	2015-16	8,50,000	8,77,224
4.	2016-17	9, 00,000	7,55,995

फसल बीमा संरक्षण कवच कैसे व कब बनेगा?

- फसलों के बीमा प्रिमीयम की रकम किसान के व्यक्तिगत खाते से बीमा कंपनी ले जाती है। पर बीमा की प्राप्ति के लिये सामुहिक नुकसान का पैमाना होता है।
- फसल बीमा के लिये आवश्यक फसलों के रॅण्डम प्लॉट मंडल के किसी 12 किसान के खेतों में डाले जाते हैं। जिनकी जानकारी किसी किसान को नहीं होती।
- बीमा कंपनी का नुकसान भरपाई देने का पैमाना क्या है इसका गांव के किसी किसान को अता-पता नहीं होता। किसान कंपनी के नाम से भटकते रहते है।
- फसल बीमा के लिये हवामान, वर्षा का अनुपात, फसलों का उत्पादन इनमें से बीमा कंपनी किसका कैसे अंकेक्षण करती है, इसका अंदाजा आज तक जिले के कृषि अधिक्षक को भी नहीं है।
- अब तक फसल बीमा कंपनी सरकार की एजंसी होती थी। पिछले दो वर्षों से यह ठेका सरकार ने प्रायवेट बीमा कंपनी को दे दिया है। इससे सरकार की जिम्मेवारी खत्म हो गयी। फसल बीमा योजना केवल नाम की व शोषण की योजना बन कर रह गयी है।
- पिछले दो वर्षों में महाराष्ट्र में **रिलायंस कंपनी** ने फसल बीमा के नाम पर किसान व सरकार के माध्यम से हज़ारों करोड़ रुपयों को प्राप्त किया। अकेले वर्धा जिले से 2 वर्षों में 30 करोड़ से ज्यादा रुपया व विदर्भ के क्षेत्र से 180.185 करोड़ रुपये की राशी प्रीमियम की किश्त के माध्यम से रिलायंस बीमा कंपनी लेकर चली गयी। इतनी ही फसल बीमा प्रीमियम की 50% राशी राज्य व केन्द्र सरकार के माध्यम से कंपनी को दी जाती है। यहां जिले के 97 हजार किसानों ने प्रिमीयम की राशी बैंकों में भरी थी। करीब 900 किसानों द्वारा फसलों के उजाड़ने की शिकायत जिला कृषि अधिकारी, बैंक मैनेजर व जिलाधिकारी के समक्ष की गयी। अबतक एक भी किसान को फसलों के नुकसान का मुआवजा नहीं मिला।

कृषि के लिए आवश्यक मुलभूत सुविधाएं कैसे प्राप्त होगी?

- सिंचन की सुविधाएं (Irrigation)
- बिजली की सुविधाएं (Electricity)
- ग्राम व खेती में पक्के रास्तों की सुविधाएं (Approach Roads)
- गांव में कृषि उत्पादन रखने के लिये धान्य गोदाम (Godown) की सुविधाएं
- बाजार में समय पर योग्य पैमाने पर बीज व खाद की सुविधाएं
- मंडल व तहसील स्तर पर हवा, पानी, मिट्टी के जांच के लिये संसाधनों से सुसज्ज प्रयोगशालाओं की उपलब्धता।
- हवामान केन्द्र के माध्यम से बारिस, धूंप व सर्दी के संबंध में योग्य व वास्तविक जानकारी की सुविधा।

प्रधानमंत्री कृषि सिंचन योजना के तहत 2015 से 2020 तक के लिये केन्द्र सरकार ने राष्ट्रीय स्तर पर कृषि क्षेत्र में सिंचन बढ़ाने के लिये 50 हज़ार करोड़ रुपयों का प्रावधान किया है। संभवतः यह एक वर्ष का प्रावधान होना चाहिए था। प्रधानमंत्री देश के 1000 लाख हेक्टर असिंचित खेती की जमीन में से अगर 10 प्रतिशत जमीन सिंचित करने के लिये सरकार ने उद्दिष्ठ रखा होता तो भी मतलब 100 लाख हेक्टर कृषि के जमीन में सिंचन सुविधाओं के लिए 5 लाख करोड़ रुपयों की आवश्यकता होती है। वर्तमान सरकार के द्वारा ग्रामीण विकास योजना के लिये GDP के 1 प्रतिशत से कम का प्रावधान किया गया है। बावजूद सरकार चाहती है कि सबका साथ सबका विकास हो। यह कैसे संभव होगा यह तो सरकार ही बता पायेगी। सरकार की घोषणाएं व कृति में विरोधाभास दिखता है।

शासन-प्रशासन की ओर से योग्य नीतियां बने व क्रियान्वयन में तत्परता आये ?

- उत्पादन की वर्तमान शासकीय पद्धति में (पैसेवारी पद्धति) में काफी सुधार की गुंजाइश है।
- फसल बीमा की योजना में फसलों के नुकसानी का मुआवजा सीधे किसान को निश्चित कालावधी में मिले इसका प्रावधान होने की आवश्यकता है।
- सिंचाई, बिजली, सड़क के प्रबंधन में सुधार के लिए व इन ग्रामीण मुलभूत सुविधाओं के निर्माण के लिए बजट में प्रावधान बढ़ाने की ज़रुरत है।
- सिंचन की व्यवस्था खड़ी करने के लिये आवश्यक प्रावधान के साथ शासन के मंत्री व प्रशासनिक अधिकारियों के माध्यम से होने वाली अनियमितताओं पर नियंत्रण की व्यवस्था बनायी जाये, ताकि ग्रामीण क्षेत्र में सुविधा के प्रसारण में व्याप्त उदासीनता के भाव को हटाने में मदद होगी।
- जंगल का व्यवस्थापन, जमीन का व्यवस्थापन, जंगली जानवरों पर नियंत्रण के लिए ग्रामीण खेतीहर लोगों को मुलभूत अधिकारों की प्राप्ति व प्रशासनिक अंकुश से निजात की जरूरत है।
- ग्रामीण स्वास्थ्य व शिक्षा सुविधा की ओर वर्षो से हो रही अनदेखी को समाप्त करने की आवश्यकता है। वर्ष 2017-18 के लिए शिक्षा पर एनडीए (भाजपा) की सरकार ने 79685.95 करोड़ रुपयों का प्रावधान किया है। कुल बजट के (21.47 लाख करोड़) यह 3.7 प्रतिशत ही है। 2013-14 की युपीए सरकार ने 4 प्रतिशत से ज्यादा की राशि का प्रावधान इसमें किया था। ग्रामीण स्वास्थ्य की सुविधा पर भी वर्तमान केन्द्र की सरकार उदासीन है। राष्ट्रीय सकल उत्पादन (GDP) के 1 प्रतिशत से कम की राशी का ग्रामीण स्वास्थ्य के लिए प्रावधान है। इस वर्ष के राष्ट्रीय बजट में 48853 करोड़ रुपये स्वास्थ्य सुविधा के लिए है। देश में 1.5 लाख से ज्यादा स्वास्थ्य केन्द्र है। यहां व्यवस्थित सुविधा, शिक्षित स्टॉफ व आवश्यक इलाज की सुविधा नहीं होती। भारत सरकार के आर्थिक सर्वे 2016-17 के अनुसार स्वास्थ्य सुविधा के विकास के लिये सकल राष्ट्रीय उत्पादन (GDP) के 4.5 प्रतिशत बजट में प्रावधान होना चाहिए।

आंदोलनकारी साथियों को यह भी समझना जरूरी है : भारत की कृषि व्यवस्था में सुधार के लिये भारत की मनोवृत्ति के सुधार की आवश्यकता है। हमें ग्रामीण कृषि क्षेत्र में आर्थिक प्रगति के लिये ग्रामीण क्षेत्र के मानसिक/बौद्धिक प्रगति पर जोर देने की आवश्यकता है। भारत गांवों का देश है और आज भी करीब 54 प्रतिशत लोग गांवों में रहते है। देहाती लोग किसानी का व्यवसाय जीवनयापन के लिये कर रहे है। उनकी आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक व स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार नहीं हो पा रहा। आज़ादी के पहले दो दशको में सकारात्मक बदलाव के दिशा में परिणाम आये। पर फिर से धीरे-धीरे हम पुरानी स्थितियों की ओर लौट रहे हैं, ऐसा दिखता है।

हमारे देश की समाज व्यवस्था में जातीयता एक महत्वपूर्ण समस्या है। संविधान के आधार से हमने ऊंच-नीच, जातीयता, छुआछूत को समाप्त किया। लेकिन समाज जीवन में इसका उच्चाटन अभी तक हम नहीं कर पाए। आज के 130 करोड़ के देश में हम दो हिस्से में बंटे हुए है। एक हिस्सा जो सवर्ण जातियों का जिसमें आज के परिस्थिति में 30.8 प्रतिशत लोग समाविष्ट है, और दूसरा जिसमें 69.2 प्रतिशत लोग सहभागी है। हमारे यहां के धर्मो की स्थितियाँ भी उसी तरह की है। नीचे दिये गये जानकारी के अनुसार भारत में जाती, धर्मों की स्थिति व अमीरी-गरीबी की जानकारी का अंदाज लगाना आसान है।

भारत का ग्रामीण खेतीहर समाज के पिछड़ेपन की वजह है :-

1. हज़ारों जातियों में, समुहों में, वर्गों में, धर्मों में पूजा-पद्धतियों में बंटा हुआ समाज है।
2. आज़ादी के बाद भी इनमें पिछले 70 वर्षों में 70 प्रतिशत समूह में व्याप्त अज्ञान व अशिक्षा से बाहर निकलने की चेतना जागृत नहीं हो पायी।
3. यह ग्रामीण-खेतीहर समाज अंध-विश्वास व दैव-वाद के कुचक्र में बुरी तरह से अभी तक फंसा हुआ है।
4. इसी ग्रामीण-खेतीहर समाज के माध्यम से देश की आबादी पिछले 70 वर्षो में दुगुना से ज्यादा बढ़ी है।
5. ग्रामीण खेतीहर क्षेत्र में कृषि में फसलों का हेक्टरी उत्पादन को बढ़ाने व प्रति व्यक्ति सकल उत्पादन को बढ़ाने की गति दुनिया के प्रगत देशों के परिप्रेक्ष्य में काफी कम है।
6. खेतीहर क्षेत्र की जनसंख्या की वृद्धि की गति भारत में संपत्तीवान लोगों की तुलना में काफी आगे है।
7. ग्रामीण खेतीहर समाज जिसका जिक्र हमने ऊपर किया है, उसमें जो 30 प्रतिशत समाज ऊंची जाती वाला है, उन्हीं के पास देश की संपत्ति की 70 प्रतिशत से ज्यादा मालकियत है। यह समाज ऊंची जाती वाला व विशिष्ट धर्म आधारित व मुख्यतः शहरों में रहने वाला व बाहरी संपर्क रखने वाला है।
8. राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (NSSO-2003-04) के आधार से देखें तो हमारे देश में खेतीहर 80 प्रतिशत लोगों के पास केवल 20 प्रतिशत जमीन की मालिकी है व 80 प्रतिशत जमीन की मालिकी 20 प्रतिशत अमीर व ऊंची जाति, धर्म के लोगों के पास है।
9. आज भी हमारे देश में 31% किसान भूमीहीन है, 29% 1 एकड़ तक सीमित जमीन धारक है। 19% किसान 1 हेक्टर तक जमीन धारक है व 20% लोगों के पास 80% जमीन के मालकाना हक है (NSSO–2003-04)।
10. राष्ट्रीय कृषि आयोग (डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन) ने अपनी रपट में कहा है कि 2 हेक्टर से कम जमीन पर खेती करनेवाले किसान के उत्पादन बढ़ाने की व उत्पादन नहीं बढ़ा तो कर्ज के बोझ तले दबने की संभावना बनेगी व बढ़ेगी। यह रपट यह भी कहती है कि ग्रामीण क्षेत्र में प्रति व्यक्ति उत्पादन बढ़ाना हमारे देश के आर्थिक प्रगति की आवश्यकता है।

किसान की फसलों को उत्पादन खर्च आधारित कीमत मिलने का अहम सवाल है। इस पर मांग करने वाले आंदोलन के कार्यकर्ता व सरकार दोनों के बीच पिछले चार दशकों से भिड़ंत होती रही है। अमूमन होता यह है कि आंदोलन के माध्यम से किसान की बात करने वाले राजनीतिक लोग जब सत्ता में जाते है तब वह किसान का पक्ष छोड़ देते है। तब पुनः कुछ सत्ताविहीन विपक्ष के नेता किसान के वाजिब फसलों के दाम मिलने के लिए न्याय की गुहार लगाते हैं। आंदोलन के माध्यम से सरकार पर दबाव लाने की कोशिशें करते है। सवाल अपनी जगह कायम है। खेतीहर किसान अब भी न्याय की अपेक्षा में है। सरकार के लिए मांग की पूर्ति करना संभव नहीं है, ऐसा शपथपत्र सर्वोच्च न्यायालय में रखकर वर्तमान शासकों ने अपनी जिम्मेवारी से छुट्टी करके मुक्ति की साँस ली है।

आजादी से पहले 1930 में संयुक्त प्रांत के किसानों के आंदोलनों में भी यह मांग आयी थी। उसकी एक वजह थी लगान की रकम काफी बड़ी होने के कारण किसान को फसलों की तत्कालीन कीमतें कम लगती थी। उसकी वजह से किसान का कर्जा बढ़ा था। इसलिए जब हम आज़ाद हुए तब हमारे सरकार ने सबसे पहले खेती/किसानी के उत्पादन पर जो लगान थी वह हटा दी। भारत में अनेक प्रांतों में ब्रिटिश हुकूमत व रियासते अपनी-अपनी तरह से लगान वसूलते थे। इस लगान का प्रतिशत उत्पादन पर लगान वसूली जाती थी। उस समय सिंचित खेती 3-4 प्रतिशत से ज्यादा नहीं होती थी। अमुमन सारी कृषि मानसून के पानी पर अवलंबित थी। उत्पादन कम होने या अकाल के आने पर भी सरकारें लगान वसूलती थी। किसान साहुकारों से कर्ज निकालकर व जमीनें गिरवी रखकर लगान देते थे। सरकार से लगान की माफी मिल जाए तो बस किसान को जैसे सबसीडी मिल गयी हो, ऐसी स्थितियां संपूर्ण भारत वर्ष में थी। देश की आजादी के आंदोलन में बड़ी संख्या में किसानी-खेतीहर लोग सहभागी हुए थे। उन्हें प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष नेताओं से यहीं आश्वासन दिया गया था कि हमारी सरकार आयेगी तो लगान की मुक्ति होगी, कर्ज से निजात मिलेगा, वाजिब दाम मिलेंगे। हमारा जीवन सुखी होगा और हुआ भी। पहली जवाहरलाल नेहरू की सरकार ने कृषि विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी थी। इसका परिणाम आज़ादी के दो दशकों तक हमें दिखाई देता है।

आज हमें फिर से वाजिब फसलों के दाम पाने के लिए किसान आन्दोलन के माध्यम से खड़े होने की ज़रुरत आन पड़ी है। इसमें सरकार को कुछ महत्वपूर्ण निर्णयों में आज के सन्दर्भ में सोचकर बदलाव के लिए कदम बढ़ाने की जरूरत है :

1. अत्यावश्यक वस्तु अधिनियम (Essential Commodity Act) 1955 के तहत कुछ वस्तुएं जैसे कपास आज अत्यावश्यक वस्तुओं में व्यवहार की दृष्टि से नहीं आती है। ऐसी फसलों को हमें इस अधिनियम से बाहर करने की आवश्यकता है।
2. आयात-निर्यात की नीति के संबंध में बाहरी वस्तुओं के आयात का परिणाम

घरेलु कृषि उत्पादन की वस्तुओं की कीमत न्युनतम मुल्य से कम नहीं हो इसका ध्यान रखकर वस्तुओं का आयात करने की सरकार की नीति हो।

3. बाहरी सस्ती वस्तुओं के आयात पर आयात कर (Import Duty) इतनी कम ना हो कि हमारी घरेलु उत्पादन की कीमतें न्यूनतम मूल्य (Minimum Support Prise) से कम हो जाए। इसमें व्यापारियों को भाव गिराने में मदद नहीं मिलेगी।

जातिगत धर्मानुसार जनसंख्या का वितरण
(जनगणना - 2011)

क्रम	धर्म/जाति	अनुसूचित जाति	अनुसूचित जनजाति	पिछड़ा	सवर्ण जाति/अन्य	कुल
1.	हिन्दू	22.2%	9.5%	42.8%	26%	100
2.	इस्लाम	0.8%	0.5%	39.2%	59.5%	100
3.	इसाई	9%	32.8%	24.4%	35.3%	100
4.	सिक्ख	30.7%	0.9%	22.4%	46.1%	100
5.	बौद्ध	89.5%	7.4%	0.4%	27%	100
6.	जैन	0.0%	2.6%	3.0%	94.3%	100
7.	जुरुस्त	1.0%	15.9%	13.7%	70.4%	100
8.	अन्य	2.6%	82.5%	6.20%	8.7%	100
9.	कुल	19.7%	8.5%	41.1%	30.8%	100

अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/पिछड़ा—कुल जनसंख्या का 70 प्रतिशत है और निर्धनता के कारण उनकी जनसंख्या में काफी वृद्धि हो रही है।

4. फसलों के उत्पादन का खर्च नियंत्रित करने के लिए बाजार के बीज व खाद पर नियंत्रण की नीति होनी चाहिए।

5. मानसून (Rain fed) पर आधारित खेती क्षेत्र के लिए बीज, खाद में विशेष सब्सीडी व बुवाई, निराई, कटाई के समय आवश्यक सरकार के द्वारा ट्रैक्टर व डीजल की उपलब्धता रियायत (Concession) दर में करायी जानी चाहिए।

6. ज्यादा उत्पादन बढ़ाने, कार्यश्रम कम करने, कम पानी की, कम लागत की व कार्य समय कम करने की दृष्टि से शोध, संशोधन व तंत्रज्ञान के आवश्यकता पर अधिक ध्यान देना होगा।

7. बाज़ार में व्यापारी व कालाबाज़ारी की वजह से फसलों की कीमतों में आने वाली अनिश्चित गिरावट को सरकार को विशेष यंत्रणा द्वारा रोकने के लिए नीति बनानी चाहिए।

8. गांवों में प्रक्रिया उद्योगों को बढ़ाने के लिये मुलभूत सुविधाओं के निर्माण की योजना बनानी होगी। डेयरी, गोट फॉर्म, पोल्ट्री फॉर्म, फ्रुट प्रोसेसिंग आदि के विकास के लिए आवश्यक बिजली, पानी व आवाजाही के लिये पक्के रास्तों के निर्माण की जरूरत है।

9. गांव में प्रक्रिया उद्योग से बनी वस्तुओं की व खेतों में आयी फसलों की गुणवत्ता अंतरराष्ट्रीय स्तर की होनी चाहिए। इसके लिये आवश्यक तांत्रिक संशोधन सुविधा, आर्थिक सहयोग, टैक्स में विशेष छूट व मार्केट में जगह बनाने के लिए आवश्यक सरकारी एजेंसियों के सहायता की जरूरत है।

10. ग्रामीण प्रक्रिया उद्योगों के लिए सरकारी हस्तक्षेप के साथ बीमा की प्रिमियम में सहूलियत व बीमा जीरो टेप (100% Insured) होनी चाहिए। किसी प्रकार की क्षति से ग्रामीण उद्योगों पर संकट की स्थिति पैदा नहीं होनी चाहिए।

11. ग्रामीण क्षेत्र में विकास की सबसे ज़रुरी बात है अज्ञान-अशिक्षा। बगैर शिक्षा के यहां किसी प्रकार के सुधार की अपेक्षा करना व्यर्थ है। इसलिए सरकार को भारतीय संविधान के आधार पर मूलभूत कर्तव्यों में व सरकार की जिम्मेवारी में सबके लिए शिक्षा की योजना अत्यंत नियोजनपूर्वक लागू करने की जरूरत है।

महामानव ज्योतिराव फूले ने 'किसान का कोड़ा (1873)' नामक पुस्तक में कहा था :

विद्येविना मति गेली।
मति विना निती गेली।
निती विना गती गेली।
गती विना वित्त गेले।
वित्ता विना शुद्र खचले
एवढे अनर्थ एका अविद्येने केले।

हमारी अविद्या (अज्ञान) ही हमारे शोषण का, दुःख का मुख्य कारण है। ❑

'सर्वोदय जगत'
के सभी सुहृद पाठकों, शुभचिन्तकों, लेखकों और सभी सहयोगियों को
सर्व सेवा संघ
एवं
सर्वोदय जगत परिवार
की ओर से
नववर्ष 2018 की हार्दिक शुभकामनाएं!!

और अन्ततः

नववर्ष आत्मबल बढ़ाने का वर्ष हो!

अंततः वर्ष 2017 का अंत हुआ और नववर्ष 2018 का शुभागमन हुआ है। नववर्ष की मंगलकामनाएं।

'बीते ताहि बिसारि देई, आगे की सुधि लेई' जैसी लोकोक्ति बहुत प्रचलित है तथापि पिछली कमियों से सीख लेने से भविष्य का मार्ग प्रशस्त ही होता है। अपनी कमियों को पाटने से ही आगे बढ़ने की हमें प्रेरणा मिलती है, इसे हम लोकसेवकों को सदा याद रखना चाहिए। अपनी कमियों को दूर कर आगे बढ़ना ही असली साधना है। जब तक मनुष्य का दिमाग शांत न हो, यह साधना कठिन होती है। अशांत मन में उठते विचारों को हम नियंत्रित भी नहीं कर सकते और इस साधना से जो एक अविश्वसनीय शक्ति प्राप्त होती है, वह भी नहीं प्राप्त कर सकते। यों कहें कि न तो हम अपने विचारों का स्वयं मालिक बन सकते है और न ही अपने पुरानी असंगत एवं नकारात्मक विचारों को मिटाकर अच्छे सकारात्मक विचार भी प्रतिष्ठापित कर सकते।

इसलिए नववर्ष में नयी चीजों के साथ-साथ कतिपय खोयी और भूली हुई चीजों की भी हमें तलाश करनी चाहिए। इस तरह ही हम इस प्रक्रिया को आत्मदर्शन की प्रक्रिया भी कह सकते हैं। इस आत्मदर्शन का अर्थ होगा—अपनी सत्ता, शक्ति और साधनों का सही स्वरूप में अपने मानस पटल पर अंकित कर लेना, जो हम जीवन भर न भूल सकें। ऐसा कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि जीवन को जगाने की प्रक्रियाओं में जिज्ञासा का प्रादुर्भाव होना और उपासना की ओर अग्रसर होना तथा साधना में प्रवृत्त हो जाना ही अध्यात्म तक पहुंचने का क्रम है। इसलिए जेपी ने सही कहा—"मनुष्य द्रव्य और आत्मा दोनों है। मानव आत्मा स्वातंत्र्य चाहती है, आनंद चाहती है और आत्मसाक्षात्कार चाहती है।" इसीलिए मनुष्य के जीवन की भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही आवश्यकताएं अवश्य पूरी होनी चाहिए। जेपी ने अध्यात्म को स्थूल नहीं माना, इसलिए यह भी कहा—'तृष्णा, बाहुल्य, सम्पत्ति-संग्रह के दूषित साधन आदि सभी अध्यात्म-विरोधी तत्त्व हैं।

स्पष्टतः ईसा मसीह से लेकर गांधी, विनोबा और जयप्रकाश तक ने विश्व में क्षमा और प्रेम का सिद्धांत स्थापित करने की कोशिश की, जिससे कि विश्व का कभी नाश न हो। क्योंकि जहां क्षमा और प्रेम है वहां लड़ाई-झगड़े और युद्ध नहीं होंगे। जहां प्रेम है वहीं स्वर्ग है और इस धरती को भी हम स्वर्ग बना सकते हैं।

गांधी का तो स्पष्ट मानना था—"सेवा तब तक संभव नहीं होगी जब तक उसका मूल प्रेम और अहिंसा न हो।" यानी हम लोकसेवकों के लिए गांधी-विनोबा-जयप्रकाश को अपने जीवन में पुनः पुनः उतारने और आत्मदर्शन की जरूरत है ताकि हम अपना आत्मबल बढ़ा सकें। अपने अंतर में जो अति महत्त्वपूर्ण क्षमताओं का भंडार है, जो मानवीय चेतना 'अध्यात्म' है, उसे विकसित कर सकें ताकि समाज में द्वेष-धर्म का स्थान प्रेम-धर्म, हिंसा का स्थान अहिंसा और पशुबल का स्थान आत्मबल ले सके। दरअसल इसके बाद ही हम गांधी, विनोबा और जेपी के अनुयायी कहलाने के हकदार भी हो सकते हैं।

आइए नववर्ष को हम ऐसे ही आत्मबल बढ़ाने वाला वर्ष बनायें।

नववर्ष की मंगल कामनाएं।

–अशोक मोती

आमंत्रण

47वां सर्वोदय समाज सम्मेलन

23, 24 एवं 25 फरवरी, 2018

आपको जानकार प्रसन्नता होगी कि महात्मा गांधी द्वारा प्रकल्पित सर्वोदय समाज का 47वां अखिल भारत सम्मेलन आगामी 23-25 फरवरी, 2018 को सेवाग्राम आश्रम में हो रहा है।

एक ही मानवता है, इसलिए हमें स्थानीय तथा वैश्विक दोनों स्तरों पर समाधान खोजने होंगे। इसीलिए विनोबाजी ने 'विश्व स्तर पर सोचिए, स्थानीय स्तर पर काम करिये' (Think Globaly and Act Locally) तथा 'जयजगत' जैसे नारे दिये थे। भारत में गांधी विचार के कार्यकर्ताओं के अभिक्रम के रूप में शुरू किये गये सर्वोदय समाज में आगे चलकर समूचे विश्व के अनेक व्यक्ति और समूह शामिल हुए, जो गांधीजी के 'सर्वोदय विचार' को पुष्ट करते हैं। 2018 के सर्वोदय सम्मेलन में स्थानीय तथा जागतिक स्तर पर प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से मानवता के लिए चुनौतियों का हल तलाशने का प्रयत्न किया जायेगा।

रेलवे कन्सेशन : भारतीय रेल ने सर्वोदय सम्मेलन में सहभाग करने हेतु सभी सहभागियों को किराये में 50 प्रतिशत की छूट प्रदान की है।

कृपया रेलवे कन्सेशन के लिए 'सर्व सेवा संघ, महादेव भाई भवन, सेवाग्राम-442101, जिला-वर्धा (महाराष्ट्र) को प्रति व्यक्ति रुपये 10/- का मनीआर्डर या नकद भेजकर प्राप्त कर लें। रेलवे आरक्षण 4 महीने पहले प्रारम्भ हो जाता है। अतः समय से अपना-अपना आरक्षण करा लें ताकि अंतिम समय में परेशानी न हो।

गांधी और खादी प्रदर्शनी : सम्मेलन स्थल पर खादी, ग्रामोद्योग और स्थानीय उत्पादन तथा गांधी विचार के साहित्य आदि से संबंधित प्रदर्शनी लगायी जायेगी। इच्छुक व्यक्ति प्रदर्शनी में स्थान के लिए सर्वोदय समाज के संयोजक से संपर्क कर सकते हैं।

आप मित्रों सहित सम्मेलन में सादर आमंत्रित हैं।

–आदित्य पटनायक
संयोजक, सर्वोदय समाज

नोट : *इसी स्थान पर 21-22 फरवरी, 2018 को सर्व सेवा संघ का अधिवेशन सम्पन्न होगा।*

ध्यान!!!

❑ हिमांशु कुमार

जब बिस्तर पर लेटते हैं
तब ध्यान दीजिए
अपने बिस्तर पर ध्यान दीजिए
उसकी मुलायमियत पर
ध्यान दीजिए
आपको अच्छा महसूस होने लगेगा
जो रजाई ओढ़ी हुई है
उस पर ध्यान दीजिए
अपने शरीर पर ध्यान दीजिए
देखिए कमर कितनी
अकड़ी हुई है
जैसे ही आप ध्यान देंगे
कमर ढीली होने लगेगी
ध्यान दीजिए
गर्दन अकड़ी हुई है
ध्यान देते ही
वह ढीली हो जाती है
हाथ पैर और पूरा शरीर
ढीला हो जाता है
ध्यान दीजिए
सांस कैसी आ रही है
इतना सब वर्तमान पर
ध्यान देंगे
तो इस सबसे पहले दिमाग
जो सोच विचार और
तनाव में व्यस्त था
अब बिलकुल खाली होकर
आपकी पकड़ में आ चुका है
अब इसे सोने की सलाह दीजिए
मुस्कुराइए अकेले ही
कुछ देर में बहुत गहरी
नींद आ जायेगी
ध्यान बहुत काम की विधि है
ध्यान का मतलब
आंख बंद करके बैठना नहीं होता
ध्यान का मतलब होता है,
ध्यान देना
ध्यान दीजिए आपका दिमाग
किस किस बात से
नफरत करता है
क्या वह दूसरे धर्म वालों और
दूसरी जाति के लोगों
काली रंग की त्वचा से
विकलांगों से या
गरीबों से नफरत करता है?
इसका मतलब है आपके
मस्तिष्क को इस सबके बारे में
नफरत का
संस्कार दिया गया है
ध्यान देते ही आपको
समझ आने लगता है
आपका मस्तिष्क
किस तरह से नफरत से
भरा हुआ है
और, आपके दिमाग में
भरी हुई यही नफरत
तनाव पैदा कर रही है
इसी तरह ध्यान दीजिए कि
आपका अस्तित्व
किन-किन चीजों से
जुड़ा हुआ है
आप ध्यान देते हैं तो
समझ में आता है
आसपास के पेड़ द्वारा
बनायी गयी हवा से ही
आप जिन्दा हैं
आपका अस्तित्व आसपास की
हर चीज से जुड़ा हुआ है
इस पर ध्यान देते ही
आप आसपास से जुड़ना
शुरू कर देते हैं
आप आस पास की
हर चीज के प्रति
प्रेम महसूस करने लगते हैं
आपका तनाव अब नहीं बचता
अब कोई व्यक्ति, कोई विचार
आपको तनाव नहीं दे रहा
इसके साथ साथ ध्यान दीजिए
कि आपका जीवन
किन किन लोगों के कारण
संभव हुआ है?
आपका मकान
कितने लोगों ने बनाया है?
आपके कपड़े
कितने लोगों की मेहनत से
बने हैं?
आपका खाना
कितने लोगों की मेहनत की
वजह से
आपके मुंह तक पहुंचा है?
आपका पूरा जीवन
किस तरह से एक विशाल
नेट यानी जाल का हिस्सा है
आप अकेले नहीं हैं
अब आप नम्र होने लगते हैं
ध्यान हमेशा जागृत रहने वाली
समझ है। (फेसबुक वाल से साभार) ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा प्रिन्टेक, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया, वाराणसी से मुद्रित। प्रधान संपादक : बिमल कुमार / संपादक : अशोक मोती।